अल्लाह से गुफ़्तुगू



लेखकः आक़ाए मोहसिन क़राअती
उर्दू अनुवादकः मौलाना हमीदुल हसन
हिन्दी अनुवादकः म०,र०, आबिद

अल्लाह से गुफ़्तुगू

पेशकशः
मो० शब्बीर व मोहसीन अली

नाम-ए-किताब	:	अल्लाह से गुफ़्तुगू
लेखक	:	हुज्जतुल इस्लाम मोहसिन क़राअती
उर्दू अनुवादक	:	मौलाना हमीदुल हसन
हिन्दी अनुवादक	:	म०,र०, आबिद
तादात	:	1000
साल	:	2014
प्रकाशन	:	अल-मुअम्मल-कल्चरल फाउन्डेशन सरफराज़ गंज, लखनऊ
क़ीमत	:	75/- Rs - 50 -

सभी मतालिब को हवाले के साथ नकल कर सकते हैं।

मिलने के पते

अल-मुअम्मल कल्चरल फ़ाउण्डेशन
सरफ़राज़गंज, लखनऊ, फोनः 0522-2405646

अल-मुअम्मल कल्चरल फ़ाउण्डेशन
मुम्बई, फोनः 09969408014

इदार-ए-इस्लाह
मस्जिद दीवान नासिर अली, यह्यागंज, लखनऊ, फोनः 0522-2261954

अब्बास बुक एजेंसी
दरगाह हज़रत अब्बास, लखनऊ, फोनः 9415102990

अल-हादी बुक एजेन्सी
दिल्ली-94 फोनः 9540492867

फ़ेहरिस्त

★★★★★

अर्ज़े नाशिर

"अलहम्दु लिल्लाहि रब्बिल आलमीन वस्सलातु वस्सलामु अला सैय्यिदिना मोहम्मदिवं व आलिहित्ताहेरीन"

आज का दौर जहाँ मानवियत व रूहानियत का फ़ुक़दान होता जा रहा है और लोग माद्दियात के पीछे दौड़ते नज़र आ रहे हैं इसी अलमिया के पेशे नज़र मुद्दतों से इस बात का शिद्दत से एहसास किया जा रहा था कि कोई ऐसी किताब मंज़रे आम पर आए जिस से बन्दा अपने माबूद से की जाने वाली गुफ़्तुगू के मफ़ाहीम से वाक़िफ़ हो यानी जब बन्दा मुस्ल्ल-ए-इबादत पर नमाज़ के लिए आये तो हक़ीक़ते नमाज़ को समझे और इबादत की लज़्ज़त को महसूस कर सके। क्योंकि नमाज़ इस्लामी इबादत में बेहतरीन इबादत का नाम है, नमाज़ इस्लाम की इन्फ़ेरादियत, इज्तेमाइयत, सियासत और अख़्लाक़ियत का बेहतरीन नमूना है जिसका मक़सद परवरदिगार से क़रीब तर होना है और नमाज़ का कमाल ही यही है कि वह नमाज़ी को बुराईयों से रोके और नेकियों की राह पर लगा दे, लोगों को माद्दियात से दूर मानवियत व रूहानियत की लज़्ज़त से आश्ना कर दे।

इदारा अरस-ए-दराज़ से इसके लिए कोशाँ था कि बिरादरे अज़ीज़ मोहम्मद शब्बीर साहब व मोहसिन अली साहब ने इस बात का तज़किरा किया और इशाअत की ज़िम्मेदारी कुबूल की तो इदारे ने इस मौज़ू से मुताल्लिक़ मशहूर मुबल्लिग़ व मुफ़स्सिरे कुरआन हुज्जतुल इस्लाम आक़ाए मोहसिन क़राअती की मशहूर किताब 'परतोय अज़ असरारे नमाज़' नामी किताब के मुन्तख़ब मौज़ूआत के तर्जुमे की ज़िम्मेदारी हुज्जतुल इस्लाम मौलाना सैय्यद हमीदुल हसन साहब (उस्ताद जमेआ इमामिया)

ने कुबूल फ़रमाई और निहायत कम मुद्दत में अच्छे अन्दाज़ में मुकम्मल किया।

अल-मुअम्मल कल्चरल फ़ाउण्डेशन के बाज़ नशरियाती ख़िदमात क़ौम के सामने हैं और यह अज़ीम किताब का हिन्दी तर्जुमा भी उन्हीं ख़िदमात की एक कड़ी है जिसे इदारा क़ारेईने किराम की ख़िदमत में पेश करने का शरफ़ हासिल कर रहा है। और उम्मीद करता है कि क़ारेईन इस किताब में पाई जाने वाली कमियों और नक़ायस की तरफ़ ज़रूर मुतवज्जह करेंगे।

बहरहाल इदारा इस किताब के मुतर्जिम हुज्जतुल इस्लाम मौलाना हमीदुल हसन साहब और जनाब म० र० आबिद साहब का तहे दिल से शुक्रगुज़ार है जिन्होंने इस किताब पर नज़रे सानी फ़रमाई नीज़ बिरादरे अज़ीज़ मोहम्मद शब्बीर साहब व मोहसिन अली साहब का भी ममनून है जिन्होंने इसकी इशाअत में तआवुन फ़रमाया। इसी तरह मौलाना हैदर अली साहब भी शुक्रिये के मुस्तहक़ हैं जिन्होंने इसकी तबाअत के सिलसिले में ख़ातिरख़्वाह ज़हमात बर्दाश्त कीं।

आख़िर में इस उम्मीद के साथ कि यह किताब हमारे क़ारेईन के लिए मुफ़ीद साबित होगी दस्त-ब-दुआ है कि परवरदिगारे आलम बिहक़्क़े मोहम्मद[स०] व आले मोहम्मद[अ०] हम सबको मानवियत और तज़किय-ए-नफ़्स की तौफ़ीक़ इनायत फ़रमाए ताकि हमारा शुमार इमामे अस्र[अ०] के सालेह मुन्तज़ेरीन में हो सके।

वस्सलाम

22 सफ़रुल मुज़फ़र 1435[हि०]

मुताबिक़ 26 दिसम्बर 2013[ई०]

अल-मुअम्मल कल्चरल फ़ाउण्डेशन

सरफ़राज़गंज, लखनऊ

अल्लाह से गुफ़्तुगू पर एक नज़र

नमाज़ इन्सान और उसके पैदा करने वाले के बीच एक राब्ता (Link) है जिसका हुक्म उसे उस सच्चे मालिक की तरफ़ से दिया गया है जिसने उसे 'अशरफ़ुल मख़्लूक़ात' (सर्वश्रेष्ठ) का दर्जा अता किया है। इन्सान को पैदा करने वाला ख़ुद इस पैदा करने पर नाज़ करता है और उसे इतना ऊँचा देखना चाहता है कि वह दुनिया की किसी मख़्लूक़ के सामने ज़लील और रुसवा न हो। उसके लिए इन्सान के पैदा करने वाले ने अपने इस महान पैदा किये को बड़ाई-ऊँचाई देने के लिए सिर्फ़ बेबसी से और गिर के (न कि अकड़ से) अपने महान दरबार में आने का न्योता दिया है जिससे उसके क़ुर्ब (पास आने) के सुन्दर मज़े पाये और अपनी ऊँचाई और तरक़्क़ी की वह मंज़िलें तैय करे जिन्हें 'मेराज की मंज़िल' के नाम से याद किया जाता है। इन्सान के सारे कामों में सिर्फ़ नमाज़ है जिसे एक मोमिन की मेराज कहा गया है।

इस्लाम धर्म की महान किताब जिसे पैग़म्बर[स०] इन्सान की नजात के लिए, अहलेबैत के साथ, सक़लैन (दो भारी चीज़ों) की सूरत में छोड़कर गए उसमें जिस तफ़सील और ज़ोर के साथ नमाज़ का तज़किरा है वह नमाज़ की अहमियत साबित करने के लिए काफ़ी है। कुरआन में

बार-बार 'अक़ीमुस्सलात' आने से नमाज़ की महानता का अन्दाज़ा लगाया जा सकता है। कुरआन मजीद के शुरु के सूरए बक़रा में जहाँ कुरआन मजीद के शक से पाक होने का तज़किरा है वहीं पर कुरआन मजीद के 'किताबे हिदायत' (सीधा रास्ता दिखाने वाली किताब) होने का ज़िक्र भी है लेकिन इसकी हिदायत से फ़ायदा उठाने के लिए जिन ज़्यादा अहम शर्तों का ज़िक्र है उनमें एक अहम और बुनियादी शर्त नमाज़ का क़्याम (ठहराव, टिकाव) है। 'व युक़ीमूनस-सला-त' कुरआन उन लोगों के लिए किताबे हिदायत है जो ग़ैब (अनदेखे) पर ईमान विश्वास रखते हैं और नमाज़ क़ाएम करते (ठहराते, सिधाते) हैं।

कुरआन मजीद ने हमारे रसूल[स०] को जो अमल, कर्म में खरेपन का पैग़ाम दिया उसमें भी सबसे पहले नमाज़ का ज़िक्र है। 'कुल इन्-न सलाती व नुसुकी व मह्या-य व ममाती लिल्लाहि रब्बिल् 'आ-लमीन' ऐ मेरे प्यारे कह दीजिए कि मेरी नमाज़, मेरी कुर्बानी, मेरा जीना और मेरा मरना सब अल्लाह के लिए है जो सब संसारों का पालनहार है।

जनाबे इब्राहीम[अ०] ने खुद अपने को और अपनी औलाद को नमाज़ सिधाने वाला ठहरा देने (Declare करने) की दुआ फ़रमाई।

जनाबे ईसा[अ०] ने अपने सिलसिले में जब खुदा की नसीहतों का तज़किरा किया तो ज़्यादा अहम नसीहत नमाज़ और ज़कात की वसिय्यत को क़रार दिया 'औसानी बिस्सलाति वज़्ज़काति मा दुम्तु हैय्या' मुझे खुदा ने नमाज़

और ज़कात की वसिय्यत फ़रमाई है जब तक मैं जीता रहूँ।

अट्ठारहवें पारे के शुरु में सूरए मोमिनून की शुरुआत मोमिनों के गुणों और उनकी कामयाबी के ज़िक्र से किया गया है। जिसमें कामयाब मोमिनों का पहला गुण नमाज़ में खुशू (अपनी बेबसी का एहसास) को क़रार दिया गया है, 'क़द अफ़्लहल मोमिनूनल लज़ीना..... बेशक वह मोमिन कामयाब है जो अपनी नमाज़ में खुशू रखते हैं।

दुनिया में भला कौन है जो कामयाबी न चाहे। ईमान वालों का पहला और सबसे अहम ज़ीना नमाज़ और उसमें खुशू है।

नमाज़ एक इबादत है जिसमें उसूल व फ़ूरूए दीन (धर्म की जड़ें और शाख़ें) भरपूर तरह से जमा हैं। इसमें अक़ीदों, विश्वासों का इज़हार भी है और कर्मों की बात भी।

नमाज़ की असलियत पर तवज्जो इन्सान को उन अक़ीदों की तफ़सील और उनके नतीजे में लागू होने वाली ज़िम्मेदारियों की तरफ़ ध्यान दिलाती है।

अगर नमाज़ की हक़ीक़त पर तवज्जो की जाए तो अन्दाज़ा होगा कि इसमें खुदा की तौहीद (एकेश्वरवाद), उसके अद्‌ल (न्याय), नेमत वाले नबियों अम्बिया व औलिया के तरीक़े (चलन) पर चलने का रुजहान और हिसाब के दिन यानी क़यामत का क़ाएदे से मानना है और इसको मन में रखे बग़ैर नमाज़ नमाज़ नहीं कही जा सकती इसलिए कि सूरए हम्द की तिलावत (पाठ) से ये सब अक़ीदे फिर से दोहरा जाते (पुर्नावृत्ति होती है) हैं और

सूरए हम्द की तिलावत के बग़ैर नमाज़ नमाज़ नहीं कही जा सकती जैसा कि हदीस में ज़िक्र हुआ है- 'ला सला-त इल्ला बि-फ़ातेहतिल किताब' सूरए हम्द के बग़ैर नमाज़ नहीं होती।

उसूले दीन (धर्म की जड़ें) वाले अक़ीदों के तज़किरे के अलावा नमाज़ में सब फ़ुरूए दीन (धर्म की शाखें) की भी पूरी-पूरी बात आ जाती है। नमाज़ नमाज़ होने के साथ-साथ इतनी देर तक जितनी देर नमाज़ पढ़ी जाती है उन सब चीज़ों से दूर रहने का नाम भी है जिन से रोज़े की हालत में दूर रहना ज़रूरी है इसके अलावा हज की कैफ़ियत के तौर पर एहराम की हालत में हराम होने वाली बहुत सी चीज़ें नमाज़ में तकबीरतुल एहराम के बाद हराम हो जाती हैं और साथ-साथ नमाज़ में भी हज की तरह मरकज़ी हैसियत ख़ाना-ए-काबा को मिली हुई है यानी नमाज़ी का मुँह ख़ाना-ए-काबा की तरफ रहना ज़रूरी है।

नमाज़ में ज़कात और खुम्स का कोई तज़किरा नहीं है लेकिन कुरआन मजीद में अकसर जगहों पर नमाज़ के साथ-साथ ज़कात का तज़किरा लोगों को नमाज़ के साथ-साथ बंदों के हुक़ूक़ (अधिकारों) की याद दिलाता है। नमाज़ की शर्तों (प्रतिबन्धों) में ग़सबी (छीना और हड़प किया) जगह, ग़सबी पानी और ग़सबी कपड़ों से परहेज़ खुदा के हुक़ूक़ के साथ बन्दों के हुक़ूक़ पूरा करने की तरफ़ ध्यान दिलाता है वह हुक़ूक़ चाहे ज़कात की सूरत में हों या खुम्स के रूप में या इनके अलावा किसी और बुनियाद पर।

खुम्स और ज़कात के अलावा नमाज़ खुद अपनी

जगह एक जिहाद (संग्राम) है जिसे जिहादे अकबर (सबसे बड़ा जिहाद) का नाम दिया जा सकता है जिसके लिए कभी नींद की कुर्बानी देनी पड़ती है तो कभी कारोबार छोड़कर माल को कुर्बान करना पड़ता है। मानो मन की चाहतों का विरोध करके जिहाद का मरहला सफ़ल होता है।

नमाज़ में 'अम्र बिल मारूफ़' (अच्छी बातों का हुक्म) का सिलसिला अज़ान से शुरु होता है और इसके बाद अक़ामत में फिर इसकी बात होती है और 'नही अनिल मुन्कर' (बुरी बातों से रोकना) के लिए खुद कुरआन मजीद में इरशाद है, 'इन्नस-सला-त तन्हा अनिल फ़हशा-इ वल मुन्कर' नमाज़ खुद बुराईयों से रोकती है।

इसके अलावा तवल्ला (प्रेम लगाव) और तबर्रा (अलगाव) पूरी नमाज़ में पाया जाता है। सूरए हम्द में तवल्ला और तबर्रा दोनों जमा हैं जहाँ नेमत पाने वालों के रास्ते की दुआ और ग़ज़ब के मारे बहके भटके हुओं के रास्ते से छुटकारे की दुआ की जाती है और फिर नमाज़ में बार-बार सलवात पर ज़ोर ख़ास तौर पर तशह्हुद में सलवात का वाजिब होना इस बात की निशानी है कि नमाज़ पूरी-पूरी तवल्ला का नाम है।

उसूले दीन और फ़ुरूए दीन का यह मिलन शायद इसी लिए दीन का खम्बा कहा गया कि इस पर पूरे मज़हब और ईमान की इमारत खड़ी हुई है। अगर यह बुनियाद न हो तो इमारत खड़ी नहीं रह सकती। शायद इसी लिए सारे कर्मों के कुबूल होने का दारो मदार इसी नमाज़ को क़रार

दिया गया है और साफ़ लफ़्ज़ों में एलान है कि अगर यह नमाज़ कुबूल हो गई तो सारे आमाल कुबूल हो जाएंगे। और अगर यह नमाज़ रद्द हो (ठुकरा दी) गई तो सारे आमाल बर्बाद हो जाएंगे। इसी लिए इस नमाज़ को कुबूल होने वाले तरीक़े से अदा करना हर ईमान वाले की बुनियादी ज़िम्मेदारी है। इसे नमाज़ की सारी तफ़सीलात और गहराईयों की तरफ़ ध्यान दिये बग़ैर अदा नहीं किया जा सकता है। एक नमाज़ी नमाज़ की हक़ीक़त पर ध्यान के बाद ही बाक़ाएदा नमाज़ी बन सकता है और इस तरह उसकी नमाज़ अपने मासूम रहनुमाओं (अगुवाओं, इमामों) के क़दम के निशान पर चलने का सुबूत दे सकती है। यह किताब "नमाज़ की हक़ीक़त पर एक नज़र" एक मोतबर आलिमे दीन और मुफ़स्सिर हुज्जतुल इस्लाम वल मुस्लेमीन आक़ाए क़राएती की किताब 'परतवे अज़ असरारे नमाज़' (नमाज़ के राज़ों की एक झलक) के कुछ चुने हुए हिस्सों का तर्जुमा है।

हुज्जतुल इस्लाम वल मुस्लेमीन आक़ाए क़राएती इस्लामी दुनिया की वह महान Personality हैं जो क़रीब आधी सदी से अपने दर्से कुरआन (कुरआन पर लेक्चरों) के ज़रिए कुरआन से जुड़े लोगों को फ़ायदा पहुँचा रहे हैं। आपके लेक्चर बराबर टी.वी. चैनल्ज़ से टेलीकास्ट होते हैं और इनसे फ़ायदा उठाने वाले हर बार नई-नई मालूमात के साथ और भी मालूमात के सिलसिले में प्यास महसूस करते रह जाते हैं। आपने क़रीब सभी इस्लामी विषयों (Topics) पर रौशनी डाली है। आपकी सादा मिसालें

सुनने/पढ़ने वालों के ध्यान को गहरे मायने मतलब की तरफ़ बड़ी आसानी से मोड़ देती हैं।

किताब की अहमियत और इसकी बड़ाई का अन्दाज़ा इसे पढ़ने के बाद ही लगाया जा सकता है। अगर इसमें किसी तरह की कोई कमी महसूस हो तो इसे तर्जुमा और उच्चरण (Quotation) की कमज़ोरी समझा जाए, अस्ल किताब की नहीं।

उम्मीद है ''नमाज़ की हक़ीक़त पर एक नज़र'' का अध्ययन (Study) इन्सान के मन को नमाज़ की बारीकियों पर ध्यान देने का एक अहम ज़रिया साबित होगा जिसके बाद हमारी नमाज़ सिर्फ़ एक रस्मी (Formal) इबादत नहीं बल्कि अपने मासूम इमामों (अगुवाओं) की तरह अपने मालिक से सच्चे लगाव और लगन का ज़रिया साबित होगी, और इस तरह उन पाक लोगों के क़दम के निशान का फ़ायदा हमारी नमाज़ को क़ुबूल होने के शरफ़ (श्रेय) का ज़रिया बनेगा। ऐ ख़ुदा! किताब के लेखक और दूसरे सारे इस्लाम की सेवा करने वालों को सेहत और सलामती प्रदान फ़रमा उनकी तौफ़ीक़ात बढ़ा दे और हमें ऐसा बना दे कि अपने मौला[अ०] के ज़ुहूर के वक़्त उनके साथ जमाअत की नमाज़ की सफ़ों में जगह बना सकें कि इस से बड़ी सआदत सफ़लता और कुछ नहीं हो सकती।

सैय्यद हमीदुल हसन ज़ैदी

नमाज़ क्या है?

सब इबादतों में जो अहमियत और क़द्रो क़ीमत नमाज़ को मिली हुई है वह किसी और इबादत को नहीं। नमाज़ के सिलसिले में नबियों ने लगातार ताकीद फ़रमाई है। जनाबे लुक़मान[अ०] ने अपने बेटे को नसीहत करते हुए फ़रमाया: "يَا بُنَيَّ أَقِمِ الصَّلٰوةَ"(लुक़मान/17)''बेटे नमाज़ क़ायम (खड़ी) करना।'' नमाज़ ख़ुदा को याद रखने का ज़रिया है। "أَقِمِ الصَّلٰوةَ لِذِكْرِي" (ताहा/14) ''मुझे याद रखने के लिए नमाज़ पढ़ो।''हमारे पैग़म्बर[स०] ने फ़रमाया: "اَلصَّلٰوةُ عَهْدُ اللهِ" (कंज़ुल उम्माल, 7/279) नमाज़ ख़ुदावन्दे आलम के साथ क़रार है। इसी तरह आप ने फ़रमाया: "قُرَّةُ عَيْنِي فِي الصَّلٰوةِ" (बिहारुल अनवार, 77/77) ''नमाज़ मेरी आँखों की ठंडक है।'' ज़िन्दगी की मुश्किलों में नमाज़ और सब्र से मदद माँगने का हुक्म दिया गया है। मौलाए काएनात फ़रमाते हैं:

"وَالصَّلٰوةَ تَنْزِيهاً عَنِ الْكِبْرِ" (नहजुल बलाग़ाह, हिकमत/252) नमाज़ घमंड से बचने का ज़रिया है। पैग़म्बरे इस्लाम फ़रमाते हैं: "اَلصَّلٰوةُ مِفْتَاحُ الْجَنَّةِ"

(नहजुल फ़साहत, जुमला/1588) नमाज़ जन्नत की कुंजी है।

"اَوَّلُ مَا يُحَاسَبُ بِهِ الْعَبْدُ الصَّلاةُ" सबसे पहले नमाज़ का हिसाब होगा।

नमाज़ः अक़्ल और सूझबूझ से

इन्सानियत का एक तक़ाज़ा दूसरों का हक़ देना और उनके एहसानों के लिए शुक्रिया देना है। अगर इन्सान दीनदार न हो तब भी इन्सानियत के नाते उसके लिए अपने साथ अच्छा बर्ताव करने वालों के एहसान में दबे होने का जज़्बा बहुत अहम होता है। जितना बड़ा एहसान और एहसान करने वाला हो उसके तईं शुक्रिया का जज़्बा भी उतना ही ज़्यादा होना चाहिए।

दुनिया में सबसे ज़्यादा एहसान करने वाला क्या ख़ुदा के अलावा कोई और भी हो सकता है? हरगिज़ नहीं, इसलिए कि वही हमारे तन-मन का मालिक और पैदा करने वाला है। हमारी सारी नेमतें उसी की मेहरबानी का सदक़ा हैं। उसने हमारी सारी ज़रूरतों का ख़याल रखते हुए उन्हें हम तक पहुँचाने की तदबीर की है, उसने नबियों और औलिया के ज़रिए हमारी हिदायत की (सीधा रास्ता दिखाया) और दुनिया की हर चीज़ को इन्सान के क़ब्ज़े में दे दिया है।

बारिश का पानी हवा को साफ़ करता है, दरियाई जानवर मुर्दे को खाकर समन्दरों का पानी ख़राब होने से बचाते हैं, हमारी आँखें दुनिया की हर चीज़ को अलग-अलग Angle से देख कर उनकी छाया हमारे दिमाग़ में महफ़ूज़ रखने का ज़रिया बनती हैं।

अगर हमारे होंटों में यह नर्मी न होती तो हम बात

नहीं कर सकते थे।

अगर नमकीन आँसू न होते तो चिकनी आँख ख़राब हो जाती।

अगर पानी कड़वा या नमकीन होता पौधे और हरियाली न होती।

अगर ज़मीन और सूरज के बीच में खिंचाव (Gravitation) न होता, अगर सूरज और ज़मीन की दूरी मुनासिब न होती, अगर पैदाइश के बाद हमें दूध पीना न आता, अगर मोहब्बत करने वाले माँ-बाप न होते, तो क्या हमारी ज़िन्दगी मुमकिन होती।

हम खुदा की नेमतों को गिन भी नहीं सकते। इतनी नेमतें अगर किसी से मिल रही हैं तो हमारे लिए उसका शुक्रिया अदा करना ज़रूरी ही है। नमाज़ खुदा का शुक्र अदा करना ही है। एक कुत्ता भी एक रोटी का टुकड़ा या एक छोटी सी हड्डी के लिए अपने मालिक के सामने दुम हिलाता है और चोरी व डकैती के वक़्त उसकी हिफ़ाज़त करता है। इतनी नेमतों को बावजूद नमाज़ की सूरत में शुक्र न करने वाला इन्सान कुत्ते से भी बुरा है।

कुछ सवाल और उनके जवाब

सवाल-1 क्या खुदा को शुक्रिये की ज़रूरत है?

जवाब- हरगिज़ नहीं! इसमें खुद शुक्र करने की अपनी लियाक़त का इज़हार है और इसके ज़रिए सिर्फ़ अपनी नेमतें बढ़ सकती है। उस्ताद की तरफ़ से शार्गिद को सिखाने-पढ़ाने में अपनी ज़हमतों (कष्ट) को मनवाना उस्ताद को नहीं बल्कि शार्गिद ही को फ़ायदा पहुँचाता है।

सवाल-2 क्या शुक्र के लिए नमाज़ ही ज़रूरी है?

जवाब- जब शुक्र अदा करना है तो उसकी मर्ज़ी के मुताबिक़ ही अदा करें जिसका शुक्र अदा कर रहे हैं। मेहरबान खुदा ने शुक्र के तरीक़े को समझने में किसी परेशानी से बचाने के लिए नमाज़ का तरीक़ा बताया है।

सवाल-3 नेमतों पर शुक्र तो समझ में आता है, परेशानियों में क्यों?

जवाब- सबसे पहले तो यह कि बहुत सी परेशानियाँ हमारी अपनी पैदा की हुई होती हैं जैसे अपनी Health का ख़याल न रखने की वजह से हम बीमार हो जाते हैं और कभी तो परेशानियाँ भी इन्सान के लिए अच्छी होती हैं। उसके अन्दर हिम्मत और हौसला पैदा होता है, उसकी सलाहियतों में निखार आता है। तीसरे परेशानियों को नेकियों और आराम के साथ मिलाकर देखना चाहिए। अगर इन परेशानियों में वह आसानियों के सामान न होते तो परेशानियों में और इज़ाफ़ा होता। इसके अलावा कभी-कभी परेशानियाँ इन्सान की रूह और मन पर धार का काम करके उसकी तरक़्क़ी का सामान करती हैं।

नमाज़ न पढ़ना

नमाज़ न पढ़ना खुदा से राबेता तोड़ने की गिन्ती में आता है और इसके बहुत गंभीर नतीजे निकलते हैं। क़यामत में जन्नत वाले जहन्नम में जाने वालों से पूछेंगे: तुम जहन्नमी क्यों हो गए? वह जवाब देंगे:

"لَمْ نَكُ مِنَ الْمُصَلِّيْنَ" (मुद्दस्सिर/43) "हम नमाज़ी नहीं थे।" कुरआन मजीद में इसके अलावा नमाज़ में सुस्ती

बरतने वालों की भी मज़म्मत है:

"فَوَيْلٌ لِلْمُصَلِّيْنَ الَّذِيْنَ هُمْ عَنْ صَلَاتِهِمْ سَاهُوْنَ" (माऊन/4-5)

वाय है उन नमाज़ियों के लिए जो सुस्ती और भुलावे के साथ नमाज़ पढ़ते हैं।

हमारे नबी[स०] ने फ़रमाया:

"مَنْ تَرَکَ الصَّلٰوةَ مُتَعَمِّدًا فَقَدْ كَفَرَ" (मुहज्जतुल बैज़ा, 1/301)

जो जान बूझ कर नमाज़ न पढ़े वह काफ़िर (नास्तिक) है। इसी तरह आप ने फ़रमाया कि बन्दे और उसके काफ़िर होने में नमाज़ छोड़ने भर दूरी है (नमाज़ छोड़ी बन्दा काफ़िर हुआ)।

नमाज़ को हलका समझना

मौलाए काएनात हज़रत अली अलैहिस्सलाम फ़रमाते हैं:

"إِنَّ أَسْرَقَ النَّاسِ مَنْ سَرَقَ صَلَاتَهُ" (बिहारुल अनवार, 84/242)

"सबसे बड़ा चोर वह है जो नमाज़ की चोरी करे।" इसी तरह आप फ़रमाते हैं: जो नमाज़ को हलका समझते हैं उनकी मिसाल उन औरतों की है जो पेट गिरा (Abortion/गर्भपात) देती हैं उन्हें न पेट से (गर्भवती) कहा जा सकता है और न ही औलाद वाली। आप फ़रमाते हैं:

"مَنْ ضَيَّعَ الصَّلَاةَ فَهُوَ لِغَيْرِهَا أَضْيَعُ" (वसाएलुश्शीआ, 3/19)

"जो नमाज़ को बर्बाद करे वह दूसरी चीज़ों का क्या ख़याल रख पाएगा!" हमारे प्यारे नबी[स०] फ़रमाते हैं जो नमाज़ को हलका समझे और उसे बर्बाद करे उसका शुमार

क़यामत में क़ारून और हामान के साथ होगा। जो नमाज़ को हलका समझे ख़ुदा उसकी उम्र और उसके माल से बरकतें उठा लेता है। आप यह भी फ़रमाते हैं: जो नमाज़ को हलका समझे वह मेरा उम्मती नहीं है।

क़ुबूल न होने वाली नमाज़ें

1- समाज के कमज़ोर लोगों के बारे में लापरवाह लोगों की नमाज़ क़ुबूल नहीं होती।

2- हराम खाने वालों की नमाज़ क़ुबूल नहीं होती। हमारे पैग़म्बर[स०] फ़रमाते हैं:

"الصَّلوٰةُ مَعَ اَكْلِ الْحَرَامِ كَالْبِنَاءِ عَلَى الرَّمْلِ.

(बिहारुल अनवार, 84/258) "हराम लुक़मे के साथ नमाज़ रेत का घरौंदा है।"

3- **घर और ज़िम्मेदारियों से लापरवाह लोगों की नमाज़:** पैग़म्बर[स०] फ़रमाते हैं: अगर कोई औरत शौहर की कमाई खाए लेकिन उसके सिलसिले में अपनी ज़िम्मेदारियाँ न निभाए तो उसकी नमाज़ क़ुबूल नहीं होती।

4- **ज़कात न देने वालों की नमाज़:** रिवायत में है कि एक दिन पैग़म्बर[स०] मस्जिद में दाख़िल हुए और 9 ऐसे लोगों को मस्जिद से निकाल दिया जो ज़कात नहीं देते थे, उसके बाद आपने नमाज़ पढ़ी।

5- **लापरवाह लोगों की नमाज़:** जो सज्दा और रुकू सही न करता हो, उसकी नमाज़ क़ुबूल नहीं होती।

6- **पेशाब पाख़ाना रोक कर नमाज़ पढ़ने वालों**

की नमाज़: इमाम जाफ़र सादिक़ अलैहिस्सलाम फ़रमाते हैं: ऐसे लोगों की नमाज़ सही नहीं है।

7- **अनचाहे पेश नमाज़ की नमाज़**: जिस पेश नमाज़ को लोग न चाहते हों लेकिन वह अपनी निजी बेइज़्ज़ती क़रार देकर मस्जिद छोड़ने पर तैयार न हो।

नियत

नमाज़ में सबसे पहले नियत वाजिब है (यानी नमाज़ पढ़ने का मन होना)। नियत से इन्सान के अमल में वज़न पैदा होता है उसका मोल बढ़ता है। नियत इबादत का रुक्न और नियत काम की बुनियाद है। ग़लत नियत के साथ अच्छा काम भी बुरा बन जाता है और नियत ही की बुनियाद पर मामूली से मामूली काम का मोल-भाव बढ़ जाता है। नियत काम के कुबूल होने की शर्त है। इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] हदीसे कुदसी (खुदा की बाणी) दोहराते हुए फ़रमाते हैं कि उसने फ़रमाया है:

"لَمْ اَقْبَلْ اِلَّا مَا كَانَ خَالِصاً لِی" जो काम सिर्फ़ मेरे लिए शुद्ध/सच्ची नियत से न हो उसे मैं कुबूल नहीं करता। नियत थोड़े अमल को ज़्यादा कर देती है।

इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] फ़रमाते हैं कि

"مَنْ اَرَادَ اللّٰهَ بِالْقَلِيلِ مِنْ عَمَلِهِ اَظْهَرَهُ اللّٰهُ اَكْثَرَ مِمَّا اَرَادَ وَمَنْ اَرَادَ النَّاسَ بِالْكَثِيرِ مِنْ عَمَلِهِ اَبَى اللّٰهُ اِلَّا اَنْ يُقَلِّلَهُ فِی عَيْنِ مَنْ سَمِعَهُ."

(रौज़तुल मुत्तक़ीन, 12/142)

जो थोड़ा कर्म भी ख़ुदा के लिए करे ख़ुदा उसे ज़्यादा करके ज़ाहिर करता है और जो ज़्यादा कर्म लोगों को

दिखाने के लिए करे ख़ुदा उसे ख़ुद उन्हीं देखने वालों की नज़र में मामूली कर देता और गिरा देता है।

नियत में ख़ुलूस

हज़रत अली[अ॰] फ़रमाते हैं:

"اَخلِص لِلّٰہِ عَمَلَکَ وعِلمَکَ وَبُغضَکَ وَاَخذَکَ وَترکَکَ وَکَلامَکَ وَصُمتَکَ" (फ़ेहरिस्त, ग़रर व आरहु एख़लास) अपना अमल, इल्म, दुश्मनी, लगाव, अलगाव, बातचीत और ख़ामोशी सब सिर्फ़ ख़ुदा के लिए ठहराओ।

ख़ुदा उस इबादत को क़ुबूल करता है जो हर एतबार से सिर्फ़ ख़ुदा के लिए हो।

"وَلا یُشرِکْ بِعِبَادَةِ رَبِّہٖ اَحَداً" (कहफ़/110)

ख़ुदा की इबादत में किसी को शरीक न ठहराओ।

शिर्क (ख़ुदा का साझी मानना) और दिखावे से परहेज़ इतना मुश्किल और सख़्त है कि इमाम हसन असकरी[अ॰] फ़रमाते हैं इन्सान के कर्म में शिर्क इतने चुपके से दाख़िल होता है जैसे रात के अंधेरे में काले पत्थर पर चींटी की चाल को महसूस नहीं किया जा सकता।

नियत के ख़ालिस होने के सिलसिले में अमीरुलमोमिनीन हज़रत अली[अ॰] से बहुत सी हदीसें दोहराई गई हैं जिनमें से कुछ मिसाल के तौर पर यहाँ बयान की जा रही हैं।

ख़ालिस (खरी) नियत इन्सान का बुनियादी और असल मक़सद है।

ख़ालिस नियत कामयाबी है।

विश्वास ख़ालिस अमल ही का नाम है।

अमल ख़ालिस नहीं तो रेत की दीवार है।

अमल (कर्म) का ख़ालिस होना इल्म का नतीजा है।

अमल के ख़ालिस होने से उसमें उड़ान की ताक़त पैदा होती है।

अगर नियत ख़ालिस हो तो आमाल में रौनक़ और इज़ाफ़ा हो जाता है।

जिसकी नियत ख़ालिस होती है वह अपनी आरज़ुएं पा लेता है।

कर्म में नियत ही की गिनती होती है।

जनाबे पैग़म्बरे इस्लाम[स०] जनाबे अबुज़र से फ़रमाते हैं: "هَمَّ بِالْحَسَنَةِ وَاِنْ لَمْ تَعْمَلْهَا لِكَيْلَا تُكْتَبَ مِنَ الْغَافِلِيْنَ"

नेकी का इरादा और नियत रखो चाहे उसे पूरा न कर सको ताकि तुम्हारी गिनती ग़ाफ़िलों, बेसुधों में न हो।

इमाम जाफ़र सादिक़ अलैहिस्सलाम फ़रमाते हैं: "مَنْ هَمَّ بِحَسَنَةٍ وَلَمْ يَعْمَلْهَا كُتِبَ لَهُ حَسَنَةً" जो नेकी का इरादा और नियत रखे चाहे उसे पूरा न करे उसके लिए नेकी लिख ली जाती है।

नियत में एख़लास की अलामत

1- दूसरों से कोई उम्मीद न लगाना

जैसा कि सूरए दहर में यतीम व असीर(बन्दी) व मिस्कीन (ग़रीब) को खाना खिलाने वालों ने अपने अमल से एलान किया:

"اِنَّمَا نُطْعِمُكُمْ لِوَجْهِ اللّٰهِ لَا نُرِيْدُ مِنْكُمْ جَزَاءً وَّلَا شُكُوْرًا" (इन्सान/9)

2- अपनी ज़िम्मेदारी पर नज़र रखना

ख़ुदा के लिए छोटा काम भी बड़ा होता है। इसलिए इन्सान काम के तरीक़े पर ध्यान दिए बिना अपनी ज़िम्मेदारी पर नज़र रखे।

3- अपने काम से शर्म न खाना

जो ख़ुदा के लिए काम करता है उसे अपने किए पर शर्म नहीं होती। अगर ख़ुदा के लिए किसी बीमार को देखने गए और वह नहीं मिला या मिलने से मना कर दिया तो शर्म नहीं करना चाहिए इसलिए कि जो काम ख़ुदा के लिए है उस पर शर्म नहीं होती है।

4- लोगों का ध्यान देने या उनकी बेपरवाही पर ध्यान न देना

लोग काम को सराहें या उस पर ध्यान न दें इस पर तवज्जो नहीं होना चाहिए। अमीरुलमोमिनीन हज़रत अली अलैहिस्सलाम फ़रमाते हैं: दिखावा करने वाले की तीन निशानियाँ हैं : "जब अकेले होता है तो काहिली करता है, जब वह लोगों के दरमियान होता है तो ऐक्टिव रहता है, जब उसकी तारीफ की जाती है तो अमल मे इज़ाफा होता है। और अगर मज़म्मत की जाती है तो अमल में कमी बरतने लगता है"। (मुहज्जतुल बैज़ा, 6/144)

5- अमल के जज़्बे का बाक़ी रहना

इन्सान का अमल अगर ख़ुदा के लिए है तो उस से थकता नहीं और उसे बराबर बरतता रहता है।

6- धन-दौलत और स्टेटस, पोज़ीशन का अमल से न रोकना

धन-दौलत, पोज़ीशन, बीवी-बच्चे, समाज कोई भी चीज़ ख़ुदा की राह में क़दम बढ़ाने से रुकावट न होना चाहिए।

कभी-कभी इन्सान अपनी पोज़ीशन को बड़ा समझते हुए बहुत से काम करने से दूर रहता है। इसे अपने आप ही को चाहना क़रार दिया जाता है। एक शख़्स घोड़े से जा रहा था रास्ते में छोटी सी नहर थी। घोड़ा रुक गया। उसके सवार ने उसे मारा तब भी आगे नहीं बढ़ा। उतर कर लगाम पकड़ कर आगे से खींचा तब भी आगे नहीं बढ़ा आख़िर एक समझदार इन्सान ने देखा और कहा कि अगर पानी को किसी चीज़ से हिला दो और वह गन्दा हो जाए तो घोड़ा आगे बढ़ जाएगा। फिर तो उसने ऐसा ही किया और घोड़ा आगे बढ़ गया। जब उस सवार ने उस समझदार से इसकी वजह पूछी तो उसने बताया कि जब तक घोड़ा पानी में अपनी तस्वीर देख रहा था अपने ऊपर पैर रखकर आगे बढ़ने के लिए तैयार नहीं था, लेकिन जब पानी गन्दा हो गया तो वह आगे बढ़ गया।

अपने आपको चाहने वाले लोग अपने मर्तबे और पोज़ीशन को देखते हुए बहुत से काम नहीं करते इसलिए कि उन्हें इस काम में अपनी तौहीन नज़र आती है।

7- ज़ाहिर व बातिन (सामने और अन्दर के मन) का एक होना

मौलाए काएनात फ़रमाते हैं:

"مَنْ لَمْ يَخْتَلِف سِرُّهُ وَعَلَانِيَتَهُ وَفِعْلُه وَمَقَالَتُهُ فَقَدْ اَدّٰى الاَمَانَةَ وَاَخْلَصَ العِبَادَةَ" (नह्जुल बलाग़ाह, ख़ुतूब/26)

जिसका खुला और छुपा और बोल और काम एक हो उसने ईमानदारी की और अपने काम को ख़ालिस रखा।

8- तअस्सुब से दूरी

अपनी जाति, क़बीला, इलाक़ा, गिरोह, गुट की तरफ़ झुकाव और इस सिलसिले में तअस्सुब ख़ालिस होने को नकारते हैं। क़ुरआन मजीद इसकी मज़म्मत करता है। इरशाद होता है:

"وَقَالَتِ الْيَهُودُ لَيْسَتِ النَّصَارَىٰ عَلَىٰ شَيْءٍ وَقَالَتِ النَّصَارَىٰ لَيْسَتِ الْيَهُودُ عَلَىٰ شَيْءٍ" यहूदी कहते हैं ईसाई ग़लत हैं और ईसाई कहते हैं यहूदी ग़लत हैं।

तअस्सुब से दूरी के साथ-साथ हक़ (सत्य) की हामी भरने का ख़याल रखना चाहिए हक़ की हामी भरने को तअस्सुब नहीं कहा जा सकता।

9- उन कामों को अहमियत देना जो पूरे नहीं हो सके। अगर इन्सान के अन्दर खोट नहीं है तो वह अपनी ज़िम्मेदारी समझता है। काम की बड़ाई न देख कर उसकी ज़रूरत को देखता है और जिन कामों को नहीं किया गया है उन्हें पूरा करने की कोशिश करता है। अल्लामा तबातबाई जब नजफ़ अशरफ़ से क़ुम आए तो आपने देखा कि फ़िक़्ह (धर्म क़ानून) व उसूल (धर्म क़ानून के उसूल) के दर्स देने वाले बहुत हैं और इसकी अहमियत भी ज़्यादा है लेकिन फ़लसफ़ा (Philosophy) और तफ़सीर (क़ुरआन की व्याख्या) की ज़्यादा ज़रूरत है इसलिए आपने इन दोनों पर लेक्चर देना शुरु किए।

ग़लती को बार-बार न करना (दोहराना)

मन में खोट और मैल न रखने वाला कभी अपनी ग़लती बार-बार दोहराता नहीं बल्कि ग़लती के एहसास के फ़ौरन बाद अपना सुधार कर लेता है और उसे अपने लिए बेइज़्ज़ती नहीं बनने देता।

ख़ुलूस का फ़ायदा

मौलाए काएनात फ़रमाते हैं:

"عِندَ تحقيق الاِخلاص تَستَنيرُ البَصائِر" (फ़ेहरिस्त गुररुल हेकम....... ख़लस/93)

पूरी तरह ख़ालिस होने के बाद सूझबूझ आ जाती है यानी मन जगमगा जाता है।

क़ुरआन मजीद में इरशाद होता है:

"يَجعَل لكم نوراً تَمشُونَ بِهِ" (हदीद/28)

ख़ुलूस के नतीजे में एक रौशनी मिलती है जिसके सहारे इन्सान क़दम आगे बढ़ाता है।

ख़ुलूस होने के नतीजे में कामयाबी मिलने में कोई शक नहीं रहता। इसलिए नमाज़ में नियत का ख़ालिस (बेखोट/खरी) होना ज़रूरी है।

नमाज़ में हाज़िरी

ख़ुदा की इबादत करने के इरादे का नाम नियत है। नियत के ज़रिए इन्सान ख़ुदा की क़ुरबत (पास होने) के वास्ते नमाज़ शुरु करता है नियत के साथ अपना दिल लगाते हुए रूह व मन की पूरी तैयारी के साथ अपना

पूरा-पूरा ध्यान बस ख़ुदा पर रखते हुए तकबीर (अल्लाहो अकबर कहना) कही जाती है। ख़ुदा की तरफ़ अपने पूरे वजुद के साथ अपने मन और बसीरत(अंतदृष्टि) को उसकी तरफ़ रखना ही नमाज़ की आत्मा/रूह है यानी अगर नमाज़ में यह बात पैदा न हो तो उसे बेजान समझना चाहिए।

अल्लाहो अकबर اَللّٰہُ اَکْبَر

ख़ुदा हमारी सोच और हमारे ख़याल से बहुत ऊँचा और परे है। उसके गुण और सराहना हमारे बयान या हमारे क़लम के घेरे से बाहर है, उसकी बड़ाई और ऊँचाई तक हमारे ख़याल की उड़ान नहीं पहुँच सकती। वह जो इरादा करता है वह फ़ौरन पूरा हो जाता है उसके इरादे व हुकमों पर बस चलना है उसने दुनिया की सारी चीज़ों और ख़ासकर इन्सान को 'नहीं' से 'हाँ' किया है, सबको रोज़ी देता है, सबको सीधा रास्ता दिखाता और सबको पलट कर उसी के दरबार में जाना है। दुनिया की हर चीज़ चाहे वह मिट्टी पत्थर जैसी हो या पेड़-पौधों में या जानवरों में हो, सब उसी के बस में हैं। वही इज़्ज़त देता और उसी का हुक्म न मानना मुसीबतों में डालता है। उसे किसी की ज़रूरत नहीं और सारी दुनिया को उसकी ज़रूरत है।

वह माँ के पेट में इन्सान की तस्वीर बनाता है और सीधे रास्ते पर बढ़ने की बात उसकी फ़ितरत (Nature) में भरता है। वही बीमारियों में अच्छा करता है, कमज़ोरों को ताक़त देता है उसके अलावा दुनिया की हर चीज़ मिटने वाली है। क़यामत में इन्सानों के हिसाब-किताब और

उनकी जज़ा व सज़ा (अच्छे-बुरे काम का बदला) की ज़िम्मेदारी सिर्फ़ उसी पर है। वह क़यामत के दिन जिसे 'मालूम दिन' के नाम से बताया जाता है, उस दिन सिर्फ़ उसका हुक्म चलेगा और उसके अलावा किसी और से कुछ भी बन न पड़ेगा। जो लोग उसके अलावा किसी और की इबादत/भक्ति करते हैं वह सब उस दिन घाटे में होंगे और अपने को हारा हुआ समझेंगे।

हमारी नमाज़ ऐसे महान पालनहार के महान नाम से शुरु होती है जिसमें नियत के बाद 'तकबीरतुल अहराम' कही जाती है।

अल्लाहो अकबर اَللّٰهُ اَكْبَر (अल्लाह सबसे बड़ा है)

अल्लाहो अकबर اَللّٰهُ اَكْبَر हमारे मज़हब और हमारे विश्वास की बड़ाई और ऊँचाई की निशानी है

नमाज़ अल्लाहो अकबर اَللّٰهُ اَكْبَر से शुरु होती है और रहमतुल्लाह (अल्लाह की रहमत, दया) पर ख़त्म होती है नमाज़ जिस में दिल और रूह की तवज्जो भी ज़रूरी होती है और ज़बान से तारीफ़ और गुणगान भी। नमाज़ में खुदा की सराहना और उसका ज़िक्र कानों से भी सुना जाता है और उसमें जैसे अंग-अंग से इबादत भी होती है।

नमाज़ अल्लाह के नाम से शुरु होती है। काफ़िरों, मूर्ति-पूजा करने वालों, ईसाईयों की तरह मूर्ति या ईसा अलैहिस्सलाम के नाम से शुरु नहीं होती। इसी तरह नमाज़ दुनिया के बादशाहों और झूठे खुदाओं के नाम से भी नहीं शुरु होती।

नमाज़ जो अल्लाहो अकबर के साथ पढ़ी जाती है सारी ग़लत और खोखली ताक़तों के ग़लत होने का एलान है। रोज़ाना की वाजिब (ज़रूरी/जिसके करने में सवाब, न करने में अज़ाब) और मुस्तहब (सुन्न्त/जो ज़रूरी तो नहीं लेकिन करने में सवाब है) नमाज़ों में कम से कम 85 बार यह मुबारक बोल 'अल्लाहो अकबर' दोहराया जाता है और नमाज़ से पहले या नमाज़ के बाद भी सुन्नत के तौर पर इस मुबारक बोल अल्लाहो अकबर का ज़िक्र होता है। अल्लाहो अकबर का यह बरकत वाला नारा बार-बार नमाज़ में दोहराया जाता है और ज़िन्दगी के मुख़्तलिफ़ पहलुओं में हमारी हिदायत (Guidance) और तरबियत (Training) और हमारी रूह/आत्मा की तरक़्क़ी इस नारे के दोहराने के साए में हो सकती है।

अल्लाह सबसे बड़ा है

अल्लाह इस से बड़ा है कि उसकी किसी दूसरे से बराबरी की जाए या उसे सामने से महसूस (Feel) किया जा सके। अल्लाह हमारी चाहतों, दूसरों की बातों, शैतानी वसवसों (बुरे ख़यालों) और दुनिया के रंग बिरंगे जलवों से बुर्जग व बरतर है। अगर ख़ुदा हमारी नज़रों में भी बड़ा हो और अल्लाहो अकबर का नारा हमारे दिल व जान और हमारे विश्वास व ईमान की गहराईयों से निकले तो दुनिया और उसके रंग बिरंगे जलवे और दुनिया की बड़ी-बड़ी ताक़तें और उनकी रंगीनियाँ हमारी नज़रों में कुछ न रह जाएंगी। और अपने मालिक की ख़ुशी, मर्ज़ी हमारे लिए सबसे बड़ी चीज़ साबित होगी।

इमाम जाफ़र सादिक़^{अ०} फ़रमाते हैं कि जैसे ही तुम नमाज़ में तकबीर कहो तुम्हारी नज़रों में सारी दुनिया बिल्कुल बेकार हो जाना चाहिए सिवाए उस ज़ात के वरना तकबीर के जवाब में तकबीर कहने वाले से कहा जाता है कि तुम झूटे हो।

अगर नमाज़ी के मन में किसी और चीज़ के बड़ा होने का ध्यान हो तो वह झूठा शुमार होता है जिस तरह मुनाफ़िक़ (पाखण्डी) ज़बान से हज़रत मोहम्मद[स०] के रसूल होने की गवाही देते थे लेकिन अपनी ज़बान पर, खुद ईमान नहीं रखते थे। ख़ुदा ने उन्हें झूठा ठहराया है। "وَاللّٰهُ يَشْهَدُ اِنَّ الْمُنَافِقِيْنَ لَكَاذِبُوْنَ" (मुनाफ़िकून/1) इसलिए कि अक़ीदा व ज़बान में इस तरह का दोहरापन एक तरह से मुनाफ़िक़त शुमार होता है इसीलिए इमाम जाफ़र सादिक़ अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि ख़ुदा ऐसे नमाज़ियों से ख़िताब (सम्बोधन/Address) फ़रमाता है:

"اَتَخْدَعُنِی؟ وَعِزَّتِی وَجَلَالِی لَاحْرِمَنَّکَ حَلَاوَةَ ذِکْرِی لَاحْجُبَنَّکَ عَنْ قُرْبِی وَالْمَسَرَّةَ بِمُنَاجَاتِی" (मुहज्जतुल बैज़ा, 1/385) क्या तू मुझे धोका देता है? मुझे क़सम है अपनी इज़्ज़त और तेज (प्रभुत्व) की तुझे अपने ज़िक्र की मिठास से महरूम कर दूँगा, तुझे अपने पास होने की लज़्ज़तों से बेमज़ा रखूँगा और अपने लिए मुनाजात की ख़ुशक़िस्मती और ख़ुशी से दूर कर दूँगा।

मरहूम फ़ैज़ काशानी इस हदीस को लिखने के बाद फ़रमाते हैं: जब तुम्हें नमाज़ में ख़ुदा से मुनाजात (चुप दुआ) की मिठास का एहसास हो तो समझ लेना कि

तुम्हारी तकबीर खुदा की बारगाह में कुबूल हो गई है और अगर ऐसा न हो तो समझ लेना कि खुदा ने तुम्हें अपनी बारगाह में कुबूल नहीं किया और तुम खुदा के धुत्कारे ठहरा दिए गए हो और उसने तुम्हारे इस कहने को सच नहीं माना है और तुम्हें झूठा क़रार दिया है।

हाँ खुदा सबसे बड़ा है, वह हर बयान, हर लिखावट और फ़िक्र व सोच से बड़ा है।

जो भी यह मानता हो उसकी नज़र में दुनिया और उसकी हर चीज़ छोटी हो जाती है। ईरानी इन्क़ेलाब के महान नेता हज़रत इमाम खुमैनी[रह०] की तरह अमेरिका जैसी देखने में बड़ी ताक़त की आँखों में आँखें डालकर आवाज़ देता है कि अमेरिका कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

क्या ऐसा नहीं है कि हवाई जहाज़ जितना ऊपर उठता जाता है। उसकी ऊँचाई से ज़मीन पर पाए जाने वाले घर और इमारतें छोटी दिखाई देने लगती हैं। बिल्कुल उसी तरह जिसने भी खुदा की तरफ़ उड़ान की है और जिसकी नज़रों में खुदा की बड़ाई ऊँचाई है उसकी नज़रों में दुनिया की हर चीज़ छोटी और मंदी हो जाती है।

मौलाए काएनात हज़रत अली[अ०] इस हालत को खुदा से डरने वालों की निशानी ठहराते हैं और फ़रमाते हैं:

"عَظُمَ الْخَالِقُ فِي اَنْفُسِهِمْ فَصَغُرَ مَادُونَهُ فِي اَعْيُنِهِمْ."

(नह्जुल बलाग़ह, खुतबा हुमाम)

सूरए हम्द

नमाज़ में सूरए हम्द पढ़ना ज़रूरी है। सूरए हम्द वह

महान सूरह है जिसमें ख़ुदा की सराहना,उसकी बड़ी-बड़ी नेमतें, उसके पाकीज़ा गुण और उसके हाकिमे मुतलक़ (परमेश्वर, Absolute Ruler) होने का तज़किरा है। इसके अलावा इस मुबारक सूरह में क़यामत का ज़िक्र है, इसमें सिर्फ़ ख़ुदाई रास्ता चाहने की ताकीद और सिर्फ़ उसी की राह में क़दम बढ़ाने का सन्देश है।

यहाँ पर इस मुबारक सूरह के कुछ अहम पहलुओं की चर्चा की जा रही है।

बिस्-मिल्-ला-हिर्-रह्मानिर्रहीम

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْم

ख़ुदा के पाकीज़ा नाम और उसकी मदद से शुरु करते हैं। वह ख़ुदा जिसका करम और जिसकी दया व मोहब्बत सबके लिए और हमेशा रहती है। दूसरों के पास या तो करम होता ही नहीं या अगर होता भी है तो बहुत कम और वक़्ती होता है। उनका करम हमेशा नहीं रहता और सबके लिए भी नहीं होता। इसी तरह उनका मक़सद भी दया मोहब्बत और मेहरबानी नहीं होती जैसा कि ख़ुदा का यह सब संसार सिर्जन करना उसकी मेहरबानी का नतीजा है: "اِلَّا مَنْ رَّحِمَ رَبُّكَ وَلِذٰلِكَ خَلَقَهُمْ"

(हूद/119) मगर यह कि तुम्हारा पालनहार रहम करने वाला है और उसी रहम के चलते उसने पैदा किया है।

हाँ! अगर कुछ लोग उसकी रहमत से दूर जाते हैं और ख़ुदा का करम उनको नहीं मिल पाता तो उसमें ख़ुद उन्हीं की कमी होती है। ख़ुदा के करम में उनके लिए भी

कोई कमी नहीं होती। हाँ उन तक उसकी रहमत पहुँचने में उनके करतूत आड़े आ जाते हैं।

अगर फुटबाल जैसी किसी चीज़ में समन्दर का पानी न समा सके तो उसमें समन्दर के पानी की कोई कमी नहीं है। पानी का उसमें न समाना उसका मुँह बंद होने की वजह से है। अगर सूरज की रौशनी किसी दीवार से छन कर आगे न बढ़ सके तो ऐसी दीवार में वह बात न होने की वजह है, इस से सूरज की रौशनी पर कोई असर नहीं पड़ता।

खुदा की रहमत फैली और आम है लेकिन कभी कुछ लोग अपने ग़लत कामों और टेढ़ी सोच के कारण उसे अपने आप तक नहीं पहुँचने देते।

हर काम से पहले बिस्मिल्लाह खुदा से प्रेम-मोहब्बत, उस पर भरोसा, उस से मदद की उम्मीद और उस से लगाव की दलील है।

बिस्मिल्लाह इल्हाम (खुदा की ओर से मन में कुछ बिठाना) का सोता, खुदा के मुबारक नाम से लगाव और शैतानी वसवसों से निजात की निशानी है। बिस्मिल्लाह सारी आसमानी किताबों का उनवान (शीर्षक) था और इसी पाक बोल से यह मुबारक किताबें शुरु हुईं।

खुदा के सब नबी भी अपने काम को अल्लाह के पाकीज़ा नाम के साथ शुरु करते थे। यह बोल इन्सान को खुदा की पनाह और उसकी हिफ़ाज़त में रखता है और जो खुदा की पनाह में पहुँच जाता है उसे सिराते मुस्तक़ीम (सीधा रास्ता) दिखा दिया जाता है।

"وَمَنْ يَعْتَصِمْ بِاللَّهِ فَقَدْ هُدِىَ إِلَى صِرَاطٍ مُسْتَقِيمٍ"

(आले इमरान/101)

"और जो खुदा से जुड़ जाए समझो कि उसे सीधे रास्ते की हिदायत कर दी गई"(सीधा रास्ता दिखा दिया गया) बिस्मिल्लाह खुदा की इबादत की निशानी और उस से लगाव की दलील है। इसका मतलब यह है कि ऐ मेरे खुदा मैं तुझे भूला नहीं हूँ, मैं अपने हर काम की शुरुआत तेरे नाम से करता हूँ और इस तरह अपने बचाव का बीमा करके अपने आप से शैतान को दूर भगाता हूँ।

इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] फ़रमाते हैं कि बिस्मिल्लाह सारे सूरों के सर का ताज है। वह खुदा की रहमत और उसकी ओर से अमान (शरण) की निशानी है।

सूरए बराअत के शुरु में बिस्मिल्लाह न आने की वजह यह है कि इस सूरे में काफ़िरों और मुश्रिकों से अलगाव का एलान है जो दया व मेहरबानी के साथ मेल नहीं खाता। इसी लिए ग़ज़ब के एलान के साथ दया व मेहरबानी की चर्चा नहीं की गई। हदीस में आया है कि हर काम यहाँ तक कि एक शेर लिखने के लिए पहले बिस्मिल्लाह कहना चाहिए। इस तरह यह बात भी है कि जो काम खुदा के नाम और उसकी याद से शुरु न हो वह अधूरा रह जाता है और उसका नतीजा जैसा चाहिए नहीं निकलता।

अल्-हम्-दु लिल्लाहि रब्बिल् आ-लमीन

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعَالَمِيْنَ

सारी तारीफ़ें उस अल्लाह के लिए हैं जो सारे संसारों

का पालनहार है और उसने इन्सान के जिस्मों को पालने पोसने के लिए सब सिर्जन किया, दरिया, पहाड़, सूरज, बन, हरियाली, समन्दर और तरह-तरह की नेमतें पैदा की हैं। और इन्सान की रूह को परवान चढ़ाने के लिए नबी भेजे हैं और किताबें भी उतारी हैं और तरह-तरह की नसीहत भरी खट्टी मीठी, होनी अन्होनी पैदा कीं उसने इन्सान को रास्ता दिखाने के लिए नेचर और अक़्ल से मेल खाते पक्के धर्म मज़हब के क़ानून भेजे हैं। ज़मीन को अपनी हुज्जत (प्रमाण) से ख़ाली नहीं रखा और आदमी को अपनी अनगिनत और खुली नेमतें कोई एहसान जताए बिना दी हैं। दुनिया के सिस्टम में अगर तनिक भर भी फेर बदल या बिखराव हो जाए तो सारी दुनिया तबाह हो जाएगी।

तख़लीक़ (सिरजन/सृष्टि) का मज़बूत निज़ाम जो दरिया, पहाड़, हरियाली, आकाश गंगा, पानी, मिट्टी, एटम, बदलते हुए मौसम, रात, दिन का आना-जाना इन्सान के जिस्म के सुख चैन का सामान, उसमें अलग-अलग तरह के जज़्बों और चाहतों का होना और उसका अलग-अलग तरीक़ों से मार्ग दर्शन जैसी बातें खुदा के पालनहारी की निशानियाँ हैं।

हमारे अंग-अंग की बनावट में जिस बारीकी और गहराई से काम लिया, साँस लेने वाले अंगों, रगों और हमारे Senses (समझ) की बनावट, खुदाई तदबीर और योजना का पता देती है।

अफ़सोस कि इन्सान शुक्र के बजाए नाशुक्रा बनने पर तुला है।

"وَكَانَ الْإِنْسَانُ كَفُوراً" (असरा/67)

(और इन्सान तो बड़ा नाशुक्रा है)

इन्सान ख़ुदा के क़रीब होने की कोशिशों के बजाए उस से मुँह फिराता है।

"وَإِذَا اَنْعَمْنَا عَلَى الْإِنْسَانِ اَعْرَضَ" (सूरए असरा/83)

(और हम जब इन्सान पर कोई नेमत नाज़िल करते हैं तो वह पहलू बचाकर किनारे हट जाता है)

ख़ुदा से मोहब्बत के बजाए खुली दुश्मनी रखता है।

"فَإِذَا هُوَ خَصِيمٌ مُبِينٌ" (यासीन/77)

बस वह तो खुला हुआ दुश्मन है।

अफ़सोस कि इन्सान तवाज़ो (Humble/हीन होने)के बजाए अकड़ और घमंड का बर्ताव करता है।

"يَا اَيُّهَا الْإِنْسَانُ مَا غَرَّكَ بِرَبِّكَ الْكَرِيمِ"

(सूरए इन्फ़ेतार/6)

(ऐ इन्सान!तुझे रब्बे करीम (दया वाले बड़े पालनहार) के बारे में किस चीज़ ने धोके में रखा है)

जैसे ही इन्सान अपने को बेलगाम देखता है उधम करता है।

"اِنَّ الْإِنْسَانَ لَيَطْغَىٰ اَنْ رَّاٰهُ اسْتَغْنَىٰ" (सूरए अलक़/6-7) (बेशक इन्सान सरकशी (उधम) करता है कि अपने को बेनियाज़ (बेपरवाह) ख़याल करता है)

ख़ुदा की दी हुई नेमतों को अपनी मेहनत का नतीजा समझता है।

"اِنَّمَا اُوتِيتُهُ عَلَى عِلْمٍ" (क़सस/78)

(क़ारून ने कहा कि मुझे यह सब कुछ मेरे इल्म (ज्ञान) की बुनियाद पर दिया गया है।) जागो और जागते रहो की आवाज़ पर कान नहीं धरता।

"وَاِذَا ذُكِّرُوْا لَا يَذْكُرُوْنَ" (साफ़्फ़ात/13)

(और जब नसीहत की जाती है तो क़ुबूल नहीं करते हैं)

यह नाशुक्रा इन्सान दुनिया के हर शख़्स की छोटी से छोटी नेकी पर उसका शुक्रिया अदा किया करता है लेकिन ख़ुदा जो सच में सारी नेमतों का देने वाला है उसको भूल जाता है।

अफ़सोस, कि इन्सान रास्ता भूल चुका है और अपनी सोच-समझ के चिराग़ को बुझा कर रखा है, उसने अपनी आँखें मूँद ली हैं और इधर-उधर की चीज़ों से जुड़ गया है। ख़ुदा के बजाए इन्सान शैतानी ताक़तों पर भरोसा करने लगता है।

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعَالَمِيْنَ के बोल, गफ़लतो को मिटा देते हैं, नेमतों को याद दिलाते हैं और ख़ुदा की पालनहारी और जग चलाने वाले का ध्यान कराते हैं।

सारे संसारों का पालनहार, सिर्जनहार, हर चीज़ का परवान चढ़ाने वाला है।

"وَهُوَ رَبُّ كُلِّ شَىْءٍ" (सूरए अन्आम/164)

वह हर चीज़ का पालने वाला है। वह ऐसा पालने वाला नहीं है जैसा इस्लाम आने से पहले बहुतों का मानना था कि दुनिया की हर चीज़ के लिए एक अलग पालने वाला

है बल्कि ख़ुदा दुनिया में जो भी है, जानदार और बेजान हर चीज़ को पालता पोसता है इसलिए सबका पालने वाला है। वह सब का मालिक, सब कुछ चलाने वाला और सबके काम बनाने और संजोने वाला है। वही पैदा करता है और वही अपने पैदा किए हुओं के कामों का ज़िम्मेदार और उनकी योजना करने वाला है।

अर्रह्मानिर्रहीम اَلرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

उसकी रहमत (दया) का आम साया हर चीज़ पर फैला हुआ है यहाँ तक कि उसकी रहमत उसके प्रकोप से ज़्यादा और पहले है।

"سَبَقَتْ رَحْمَتُهٗ غَضَبَهٗ" उसने गुनहगारों के लिए तौबा का दरवाज़ा खोला है और वादा किया है कि मौत के वक़्त तक की जाने वाली तौबा भी क़ुबूल करेगा। वह तौबा करने वालों से मोहब्बत करता है।

"اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ التَّوَّابِيْنَ" (बक़रा/222)

उसने दया और दान को अपने ऊपर ज़रूरी कर लिया है।

"كَتَبَ رَبُّكُمْ عَلٰى نَفْسِهِ الرَّحْمَةَ" (अन्आम/54)

और सबकी उम्मीद बंधाकर उन्हें अपनी रहमत की तरफ़ बुलाया है।

"لَا تَقْنَطُوْا مِنْ رَّحْمَةِ اللّٰهِ اِنَّ اللّٰهَ يَغْفِرُ الذُّنُوْبَ جَمِيْعًا"

(सूरए ज़ुमर/53)

(ख़ुदा की दया से बेआस न होना अल्लाह तमाम गुनाहों का माफ़ करने वाला है।)

उसकी महान रहमत का एक महान नमूना यह है कि वह बुराईयों को नेकियों में बदल देता है।

"يُبَدِّلُ اللّٰهُ سَيِّاٰتِهِمْ حَسَنٰتٍ" (सूरए फ़ुरक़ान/70)

(परवरदिगार उसकी बुराईयों को अच्छाईयों से बदल देगा।) यहाँ तक कि उसकी तरफ़ से पेश आने वाली सख़्तियाँ, मुसीबतें, बलाएं और अच्छे न लगने वाले वाक़िए भी एक तरह से उसकी रहमत ही का नतीजा हैं ताकि इन्सान को भुलावे व बेख़बरी से बाहर निकाल कर हालात से निमटने के लिए तैयार रखे। मुश्किलें उठाना और इन पर सब्र करना औलिया (ख़ुदा के दोस्तों) के लिए भी एक सुहावनी नेमत है जिसकी मिठास उन्हें कड़वे और बुरे लगने वाले हालात के बदले में मिलने वाले सवाब की सूरत में महसूस होती है।

मालिकि यौमिद्दीन مَالِكِ يَوْمِ الدِّيْنِ

वह हिसाब (सज़ा व जज़ा) के दिन का मालिक है। यह दूसरा गुण है जो ख़ुदा के लिए बयान हुआ है। यह गुण ख़ुदा की तारीफ़ के सिलसिले में बयान हुआ है। इन्सान आमतौर पर तीन मौक़े या तीन हालात में शुक्र अदा करने पर तैयार होता है:-

(1) जब पिछली बुराईयों पर ध्यान देता है।

(2) जब अभी के हालात में मज़ा और मोहब्बत महसूस करता है।

(13) जब आगे के मज़े और प्यार की उम्मीद होती है।

इस लिए सारी तारीफ़ें सराहनाएं सिर्फ़ ख़ुदा के लिए

ठीक होती हैं और उसी से ख़ास हैं इसलिए कि उसने हमारे पिछले वक़्त का भी ख़याल रखा है और उसने हमें नेमतों से नवाज़ा है इसी तरह आज कल के हालात में भी उसकी महान नेमतें हमें मिली हुई हैं और क़यामत में हमारी सारी उम्मीदें उसके महान रहम-करम से जुड़ी हैं। वह मालिक है वह भी सच्चा हक़ीक़ी और वाक़ई न कि दुनिया के मालिकों की तरह सिर्फ़ फ़र्ज़ी और नाम के जिनकी हक़ीक़त में कोई औक़ात नहीं होती।

यूँ तो इन्सान दुनिया में पिछले या छुपे हुए शिर्क के फैले जाल में जकड़ा है लेकिन क़यामत में सबको मालूम हो जाएगा कि दुनिया और उसमें पाई जाने वाली सारी चीज़ें सिर्फ़ एक अकेले ख़ुदा वाहिद की मिल्कियत हैं वह हर चीज़ का मालिक और उसका बिला क़ैद व शर्त हाकिम है।

"وَالْاَمْرُ يَوْمَئِذٍ لِلّٰهِ"(इन्फ़ेतार/19)

(और सारा इख़्तियार (Power और चाह) अल्लाह के हाथों में होगा।) क़यामत में लोगों से पूछा जाएगा:

"لِمَنِ الْمُلْكُ الْيَوْمَ" आज किसकी हुकूमत (राज) है? वह लोग जवाब देंगे:

"لِلّٰهِ الْوَاحِدِ الْقَهَّارِ"(मोमिनी/16) ज़बरदस्त और एक अकेले अल्लाह की।

"مَالِكِ يَوْمِ الدِّيْنِ" का टुकड़ा इन्सान को क़यामत और उस दिन होने वाले हिसाब-किताब की याद दिलाता है जब तक इन्सान का हिसाब नहीं लिया जाता उस वक़्त तक उसे चाहिए कि खुद अपना हिसाब-किताब रखे।

"حَاسِبُوا قَبلَ اَنْ تُحَاسَبوا" (मवाइज़े पैग़म्बर[स०] व अबूज़र)

इमाम ज़ैनुल आबेदीन[अ०] जब नमाज़ में इस टुकड़े की तिलावत (पाठ) फ़रमाते थे तो इसको इतनी मर्तबा दोहराते थे कि लगता था कि रूह उनके जिस्म से निकल जाएगी। (नूरुस्सक़लैन, 1/16)

दीन के मायनी जज़ा (बदले) के हैं। खुदा जज़ा और इन्आम के दिन का मालिक है। इस सूरह में खुदा की रहमत की तरफ़ भी इशारा है और उसके क़हर व ग़ज़ब की तरफ़ भी ताकि तरबियत (पलने-बढ़ने) का सही मरहला (Stage) यानी ख़ौफ़ व रजा (डर और उम्मीद) के बीच मोहब्बत और ग़ज़ब दोनों की ज़रूरत साफ़ खुल सके।

इय्या-क नअ्-बुदु व इय्या-क नस्तईन

إِيَّاكَ نَعْبُدُ وَإِيَّاكَ نَسْتَعِينُ

सिर्फ़ तेरी इबादत करते हैं और सिर्फ़ तुझ से ही मदद चाहते हैं।

अब तक इन्सान ने अपने मबदा व मआद यानी आग़ाज़ और अंजाम के बारे में अपने अक़ीदों (विश्वासों) को ज़ाहिर किया और उन्हें अपनी ज़बान पर जारी किया इसलिए अब इस अक़ीदे का नतीजा खुदा की ख़ालिस इबादत भक्ति और सिर्फ़ उस से मदद की उम्मीद की सूरत में निकलना चाहिए।

यहाँ पर नमाज़ी अगर अकेला हो तब भी अपने लिए जमा (Plural/बहुवचन) ही इस्तेमाल करता है ताकि अपने को दूसरे इबादत करने वालों के साथ ठहरा सके। इस तरह शायद उसकी अधूरी इबादत ऐसे इबादत करने

वालों में जिनकी इबादत सच में पूरी होती है और जो इबादत में ख़ुलूस का पूरा ख़याल रखने वाले इ़ज़्ज़त वाले लोग होते हैं उनकी इबादत में शामिल होकर ख़ुदा के यहाँ क़ुबूल हो जाये।

इबादत का तज़किरा मदद माँगने के ज़िक्र के साथ आया है ताकि उसकी इबादत करने के साथ-साथ सही रास्ते के चुनने के लिए भी उसी से मदद माँगेंऔर इस रास्तें में भटकने से बचे रहकर इबादत करे और इस सिलसिले में घमण्ड, ख़ुद पसन्दी, दिखावे और सुस्ती का शिकार न हो जाएं। इनके लिए सिर्फ़ उस से मदद माँगना चाहिए इसलिए कि ईमान और ख़ुदा की पहचान की तौफ़ीक़ उसी की तरफ़ से दी होती है।

सुबह के वक़्त जल्दी जागना, वुज़ू करना, चलने-फिरने और उठने-बैठने की ताक़त उसी की दी हुई है। नमाज़ का क़ुबूल होना और दिखावे और घमण्ड-अकड़ से हिफ़ाज़त उसी के हाथ में है। इबादत से हमारी दिलचस्पी उसी के करम, नर्मी और दया की गिरवी है। नमाज़ी ख़ुदा की इबादत के लिए उठ खड़ा होता है और इस में उसी से मदद माँगता है।

इबादत सिर्फ़ ख़ुदा की करना चाहिए। उसमें न पूरब की तरफ़ झुकाव हो और न पच्छिम की तरफ़ रुजहान, इन्सान को न माल व दौलत की ग़ुलामी करना चाहिए और न किसी के ज़ोर-ज़बरदस्ती की बुनियाद पर उसकी इबादत पर तैयार होना चाहिए। इसी तरह उसे अपनी चाहतों, और स्टेटस का ग़ुलाम भी नहीं होना चाहिए और

न ही अपने बीवी-बच्चों और माल व दौलत के चंगुल में फंस कर रह जाना चाहिए।

नमाज़ का यह बोल खुदा के अलावा दुनिया की हर चीज़ की हुकूमत और उसके दबाव का इन्कार और उसकी तोड़ करता है, हर तरह की गिरावट से परहेज़ और खोखली ताक़तों की गुलामी से महफ़ूज़ रखता है। यह नमाज़ियों को सिर्फ़ खुदा की इबादत के साए में इज़्ज़त के साथ जीने की उमंग देता है कि इन्सान खुदा के अलावा किसी का गुलाम न बन जाए और दूसरों की तरफ़ से दी जाने वाली उम्मीद की लालच या धमकियों में आकर भटक न जाए और खुदा का रास्ता छोड़कर दूसरे की तरफ़ न झुक जाए।

इह्-दि-नस्-सिरातल मुस्तक़ीम

اِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيْمَ.

खुदा की हम्द और सराहना और उसके तईं इज़हारे बन्दगी और सिर्फ़ उसी की मदद की उम्मीद के तज़किरे के बाद उसकी बारगाह से सबसे पहली दुआ सही और सीधे रास्ते की तरफ़ हिदायत (Guidance) की दुआ है। इन्सान के सोचने और करने में उसके अक़ीदे/विश्वास और रुजहान में सही रास्ते के चुनने की बहुत अहमियत है। यह अहम होने के साथ-साथ बहुत ही मुश्किल भी है इसलिए खुदा से यह दुआ की जाती है कि सही रास्ते पर रखने में उसकी हिदायत करे।

जब सीधे और सही रास्ते (सिराते मुस्तक़ीम) की बात हो तो ग़लत और टेढ़े रास्तों का भी तज़किरा होगा

अगर उन भटका देने वाले रास्तों की पहचान हो जाए तो सही रास्ते की पहचान भी मिल जाएगी। इसलिए सबसे पहले ग़ैर मुस्तक़ीम (ग़लत रास्तों) की तरफ़ इशारा करना मुनासिब है।

ग़ैर मुस्तक़ीम (टेढ़े) रास्तेः

(1) लालच और ऐश का रास्ता जो चाहतों के तूफ़ान या गैज़ व ग़ज़ब के अन्धेरों की सूरत में सामने आता है।

(2) दूसरों के लालच और ऐश का शिकार बनने का रास्ता।

(3) बाढ़-कमी और सिर्फ़ एक पहलु (माद्दियात/Materialism) पर नज़र रखने का रास्ता।

(4) शैतानी ख़यालों और उनके रंगारंग चेहरों का रास्ता।

(5) तागूतों (झूठे खुदाओं) और ज़ालिम और जाबिर हाकिमों का रास्ता जो डर व लालच देकर दूसरों को अपना असीर बनाते हैं।

(6) दुनिया की चाह का रास्ता दुनियावी लज़्ज़तों के पाने के लिए इन्सान दुनिया वालों क़ी गुलामी करता फिरता है।

(7) सोच-समझ से परे रास्ते जिनकी बुनियाद झूठे प्रोपेगण्डों पर होती है।

(8) जिस रास्ते को इन्सान बग़ैर किसी सोच, मश्वरे और तजुर्बे के अपना लेता है।

(9) जो रास्ता अपने चलने वालों को हलाकत

(मरन) तक पहुँचाने वाला हो (गुमराहों और ग़ज़ब का शिकार लोगों का रास्ता)

(10) निजी अक़ीदों व नज़रियात और आदतों और तौर-तरीक़ों का रास्ता।

इन रास्तों को पहचानने के बाद सिराते मुस्तक़ीम,क्या है, किधर है, कौन सा है, यह आसानी से समझा जा सकता है। कहा जा सकता है कि फिर सिराते मुस्तक़ीमः

1- ख़ुदा का रास्ता हैः

"اِنَّ رَبِّی عَلٰی صِرَاطٍ مُّسْتَقِیْمٍ" (सूरए हूद/56)

(मेरे पालनहार का रास्ता बिल्कुल सीधा रास्ता है)।

2-नबियों का रास्ताः

"اِنَّکَ عَلٰی صِرَاطٍ مُّسْتَقِیْمٍ" (सूरए ज़ुख़्रुफ़/43)

(बेशक आप बिल्कुल सीधे रास्ते पर हैं)।

3- इबादत,भक्ति का रास्ताः

"وَاَنِ اعْبُدُوْنِی هٰذَا صِرَاطٌ مُّسْتَقِیْمٌ"(सूरए यासीन/61)

(और मेरी इबादत करना कि यही सिराते मुस्तक़ीम, सीधा रास्ता है)।

4- मासूम रहबरों (अगुवाओं) का रास्ताः जैसा कि इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] ने इरशाद फ़रमायाः

"وَاللّٰهِ نَحْنُ الصِّرَاطُ الْمُسْتَقِیْمُ" (नूरुस्सक़लैन, 1/17)

5- ख़ुदा और उसके बनाए हुए क़ानून नियमों से जुड़ने का रास्ताः "وَمَنْ یَّعْتَصِمْ بِاللّٰهِ فَقَدْ هُدِیَ"

(सूरए आले इमरान/101) (और जो ख़ुदा से जुड़ जाए समझो कि उसे सीधे रास्ते की हिदायत कर दी गई)।

कुछ याद दिलाने की बातें

1- सिराते मुस्तक़ीम के मायने अलग-अलग लोग, अलग-अलग हालात और अलग-अलग ज़माने के एतबार से बदलते रहते हैं। कभी सिराते मुस्तक़ीम ख़ामोशी का नाम है तो कभी खुल कर आवाज़ ऊँची करने का। किसी के लिए माल की क़ुर्बानी सिराते मुस्तक़ीम है तो किसी के लिए जान की भेंट पेश करना सिराते मुस्तक़ीम की हैसियत रखता है।

किसी के लिए जानने और सीखने का रास्ता सिराते मुस्तक़ीम है तो किसी के लिए कारोबार में हिस्सा लेना। अलबत्ता आराम चाहने वाले लोगों के लिए हमारी इस बात को बहाना बनाकर मज़हबी अख़लाक़ी (नैतिक) और समाजी ज़िम्मेदारियों से फ़रार करना मुनासिब नहीं है।

2- जो लोग सिराते मुस्तक़ीम पर चल रहे हैं और इस रास्ते में अपने ख़ास हालात व इमकानात से सुखी हैं उन्हें दूसरे तरीक़े वाले लोगों पर तन्क़ीद (आलोचना) करने और उनके काम में कमी और खोट निकालने की इजाज़त नहीं है इसलिए कि ख़ुदा तक पहुँचने के बहुत से रास्ते हैं और इन्सानी कर्म के दरजे अलग-अलग होते हैं यानी हो सकता है कि बहुत से अफ़राद किसी एक झण्डे के तले अलग-अलग सवारियों से सिराते मुस्तक़ीम का रास्ता चल रहे हों।

3-सिराते मुस्तक़ीम पर चलना जितना अहम है उस

से कहीं ज़्यादा अहम उस पर बाक़ी रहना है इसलिए कि इन्सान हमेशा लड़खड़ाने और बहकने के ख़तरों के सामने रहता है। मौलाए काएनात हज़रत अली अलैहिस्सलाम इस आयत की तफ़सीर (व्याख्या) में फ़रमाते हैं कि

"اِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيْمَ" का मतलब यह है कि हमारी आगे की ज़िन्दगी भी सिराते मुस्तक़ीम पर टिकी रख।

4-इन्सान को अपनी तरक़्क़ी और कमाल की आख़िरी मंज़िल यानी 'इस्मत'(पापों से पूरी तरह बचत) के मरहले में भी ख़ुदा से सिराते मुस्तक़ीम की दुआ करना चाहिए इसलिए कि इस राह के अलग-अलग दरजे होते हैं। नूरे ज्ञान और सूझबूझ की तरह इस रास्ते में भी तरक़्क़ी के अलग-अलग मरहले(Stages) होते हैं। कुरआन मजीद हिदायत पा चुके लोगों की हिदायत (रास्ता दिखाने) में इज़ाफ़े के बारे में एलान करता है:

"وَيَزِيْدُ اللّٰهُ الَّذِيْنَ اهْتَدَوْا هُدًى" (सूरए मरयम/76)

ख़ुदा हिदायत पा चुकने वाले लोगों की हिदायत (रास्ता दिखाने) का इरादा रखता है। दुआ 'मकारिमुल अख़्लाक़' में इमाम ज़ैनुलआबेदीन अलैहिस्सलाम अपने ख़ुदा से दरख़्वास्त फ़रमाते हैं कि ईमान, यक़ीन और दूसरी बातों और मक़सदों में उनके सबसे कामिल/पूरे और ऊँचे मर्तबे तक पहुँचाए और उस पर चलता रखे।

5- सिराते मुस्तक़ीम की पहचान मुश्किल और उस पर चलना एक बारीक रास्ते पर चलना है जो फिसलाने वाला, बाल से ज़्यादा बारीक और तलवार की धार से

ज़्यादा तेज़ है। ज़्यादा तर लोग या उसकी पहचान में बहक जाते हैं या उस पर चलकर भटक जाते हैं कोई कर्म की मंज़िल में ग़लत रास्ते पर चल पड़ता है तो कोई अक़ीदे, विश्वास में भटक जाता है इस तरह कोई जब्र (ख़ुदा लोगों को काम पर मजबूर करता है, यह मानना) का अक़ीदा अपना लेता है और कोई तफ़वीज़ के नज़रिये (यह समझना कि जो भी काम हम करते हैं वह ख़ुदा का सौंपा हुआ है) से जुड़ जाता है।

एक गिरूह मासूम रहबरों से अक़ीदत (श्रद्धा) ज़ाहिर करने में इतना आगे बढ़ जाता है कि वह कुफ़्र (ख़ुदा को न मानना) का शिकार होकर उन्हें ख़ुदा मान बैठता है तो दूसरा गिरूह उन्हें एक आम इन्सान बल्कि उस से भी गया-गुज़रा दीवाना और जादूगर समझता है। कोई मासूम इमामों[अ०] की ज़ियारत को शिर्क क़रार देता है तो कोई पेड़-पौधों बल्कि कंकड़ पत्थर तक से अपनी दुआएं माँगता है। कोई पूरी तरह दुनिया में डूब जाता है, कोई दुनिया को बिल्कुल तर्ककर राहिब (ब्रहमचारी) बन जाने का रास्ता चुन लेता है। कोई इतना ख़र्च करता है कि फ़क़ीर हो जाता है और कोई बहुत ही कंजूस होता है। कोई ग़ैरत के मारे अपनी बीवी तक का नाम लेना गवारा नहीं करता और कोई अपनी बीवी को बेपर्दा सड़कों पर घुमाता है। इस्लाम ने इन्सानों को सिराते मुस्तक़ीम यानी सीधे रास्ते पर चलते रहने पर ज़ोर दिया है जो सब मामलों में बीच का और Balancedरास्ता है यहाँ तक कि ख़ुदा की इबादत के सिलसिले में भी बीच का रास्ता ज़रूरी है इस

सिलसिले में हदीस की किताबों में
الاِقْتِصَادُ فِى العِبَادَة यानी इबादत में बीच का रास्ता और Balanceका चैप्टर रखा है।

सिराते मुस्तक़ीमः रिवायत की रौशनी में

इमाम हसन असकरी अलैहिस्सलाम नमाज़ में पढ़े जाने वाले इस बोल के बारे में फ़रमाते हैंः इसके ज़रिए नमाज़ी पहले की तरह आगे की ज़िन्दगी में भी अपने लिए इबादत की तौफ़ीक़ की दुआ करता है। सिराते मुस्तक़ीम वह रास्ता है जो छोटी सोच से बहुत ऊँचा और ऊपर और ख़याल और हद से ज़्यादा ऊँचा हद से बढ़ने की उड़ानों से नीचे है।

(बिहारुल अनवार, 24/9)

इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] फ़रमाते हैं कि सिराते मुस्तक़ीम वह रास्ता है जो इन्सान को ख़ुदा की मोहब्बत और उसके दीन तक पहुँचा दे। लालच की गुलामी से छुटकारा दिलाकर अपने ज़ाती ख़यालात और निजी नज़रियात के पीछे चलने से दूर रखे।

(बिहारुल अनवार, 24/9)

किताब 'बिहारुल अनवार', जि-56 में इस सिलसिले में एक हदीस है जिसमें ज़िक्र है कि सिराते मुस्तक़ीम पाक इमामों और उनके सच्चे पीछे चलने वाले लोग हैं। यह पाक लोग पुण्यात्माए सत्य के रास्ते की प्रतिमा हैं। इनकी प्यार मोहब्बत, क़हर व ग़ज़ब, जंग व शान्ति, इबादत-भक्ति, कारोबार, सोच-विचार, चाल-चलनऔर किरदार सबके सब ख़ुदा के हुक्म के बिल्कुल मुताबिक़ हैं।

मानो ये पाक लोग बस सिराते मुस्तक़ीम हैं और इस दुनिया में इनके पीछे चलना (अनुयाय) एक दुश्वार और ज़िम्मेदाराना काम है। आख़िरत के दिन बिल्कुल उसी सिरात की तरह जो जहन्नम पर बना हुआ बाल से ज़्यादा बारीक और तलवार की धार से ज़्यादा तेज़ है आख़िरत का सिरात दुनिया के सिराते मुस्तक़ीम का ही एक रूप है। जो इस दुनिया में सत्य और सिराते मुस्तक़ीम पर चलेगा वह उस पुले सिरात से आसानी और फुर्ती के साथ गुज़र सकेगा लेकिन जो लोग दुनिया में बाढ़-कमी का शिकार होंगे उनके लिए आख़िरत के पुले सिरात से गुज़रना बहुत ही मुश्किल होगा। मौलाए काएनात हज़रत अली[अ०] ने सिराते मुस्तक़ीम से भटक कर बाढ़-कमी का शिकार हो जाने वालों का इस तरह नक़शा खींचा है:

❖ उनकी आरज़ुएं इतनी ज़्यादा होती हैं जैसे वह लोग लालच के शिकारी हों।

❖ उनकी लालच ऐसी होती है कि हद से ज़्यादा लालच का शिकार हों।

❖ इसके बाद अगर उन्हें किसी चीज़ से निराशा हो तो अफ़सोस से मर जाते हैं।

❖ तकलीफ़ के वक़्त उनका गुस्सा तूफ़ान का रूप धारे होता है।

❖ खुशी के वक़्त बुरी तरह मस्त नज़र आते हैं।

❖ धन-दौलत उन्हें विद्रोही/बाग़ी बना देती है।

❖ बुरे लगते वाक़िये उन्हें रोने-पीटने पर आमादा कर देते हैं।

❖ उनके लिए हर कमी नुक़सान वाली और हर ज़्यादती तबाह करने वाली होती है।

ऐसी कमी या ज़्यादती जिहालत से पैदा होती है अलबत्ता इस कमी और ज़्यादती कोपहचानना बहुत ही मुश्किल है। दुनिया में हर इन्सान सिर्फ़ अपने तरीक़े को बीच का और समझ वाला करता है और दूसरों पर उग्रवाद या कमी का इल्ज़ाम लगाता है और ज़्यादती या कमी की तरफ़ अपने इस निस्बत देने के अमल में खुद ही इफ़रात या तफ़रीत का शिकार हो जाता है।

लेकिन औलियाए इलाही और अम्बिया की तालीमात पर अमल करने के पाबन्द अफ़राद अपने फ़ैसलों में हक़ को ही मेयार क़रार देते हैं।

बद और कमी की मिसालें

हदीसों में सिराते मुस्तक़ीम (सीधे रास्ते) से भटकने की बहुत सी बातों की निशानी दी गई है यहाँ पर इस रास्ते में बद या कमी के कुछ नमूने बयान किए जा रहे हैं।

1- मौलाए काएनात हज़रत अली[अ०] दूसरों की तारीफ़ बयान करने के बारे में फ़रमाते हैं:

किसी की उसके हक़ से ज़्यादा तारीफ़, ख़ुशामद और चापलूसी शुमार होती है और उसके हक़ से कम बयान करना जलन में गिना जाता है।

इसी तरह की उसके हक़ से ज़्यादा मज़म्मत और बुराई के बारे में आप फ़रमाते हैं:

किसी की मज़म्मत और बुराई हटधर्मी की आग और भड़काने का काम करती है।

2- कुरआन मजीद में माल ख़र्च करने के बारे में इरशाद होता है:

"وَالَّذِيْنَ اِذَا اَنْفَقُوا لَمْ يُسْرِفُوا وَلَمْ يَقْتُرُوْا وَكَانَ بَيْنَ ذَالِكَ قَوَاماً"

(सूरा'फुरक़ान'/67)

खुदा के नेक बन्दे जब माल ख़र्च करते हैं तो उसमें न ज़्यादा ख़र्च (फुज़ूलख़र्ची) करते हैं और न कन्जूसी।

सिरातल-लज़ी-न अन-अम-त अलैहिम

صِرَاطَ الَّذِيْنَ اَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ

यानी उन लोगों के रास्ते पर रख जिन्हें तूने अपनी नेमतों से मालामाल किया है।

जिन लोगों के रास्ते पर बाक़ी रहने के लिए ख़ुदा की बारगाह में दुआ की जाती है उनकी पहचान इस आयत के ज़रिए करायी जाती रही है।

وَمَنْ يُطِعِ اللّٰهَ وَالرَّسُوْلَ فَاُولٰئِكَ مَعَ الَّذِيْنَ اَنْعَمَ اللّٰهُ
عَلَيْهِمْ مِنَ النَّبِيِّيْنَ وَالصِّدِّيْقِيْنَ وَالشُّهَدَآءِ وَالصّٰلِحِيْنَ
وَحَسُنَ اُولٰئِكَ رَفِيْقاً. (सूरए निसा/69)

जो ख़ुदा और रसूल के क़हने पर चलते हैं वह लोग उन पाक लोगों के साथ क़रार पाएंगे जिन पर ख़ुदा ने नेमतें दी हैं जैसे नबी, सच्चे, शहीद और नेक लोग बेहतरीन दोस्त हैं।

यह जो रोज़ाना दिन में कई बार आयत तिलावत की (पढ़ी) जाती है इसमें ख़ुदा से यही दरख़्वास्त की जाती है कि हमें ऐसे लोगों में ही क़रार दे जिन का तज़किरा चार तरह के लोगों के साथ किया गया है।

'तफ़सीरे नमूना' में ज़िक्र हुआ है कि चार जमाअतों (अम्बिया, सिद्दीक़ीन, शोहदा, सालेहीन) के तज़किरे का मतलब शायद यह हो कि एक सेहत वाले तरक़्क़ी पाये और मोमिन समाज बनाने के लिए सबसे पहले खुदाई रहबर और अम्बिया अमल के मैदान में उतरते हैं। इसके बाद सच्चे मुबल्लिग़ जिन्हें सिद्दीक़ (सच्चों) के नाम से याद किया जाता है, तबलीग़ की ज़िम्मेदारियाँ पूरी करते हैं ऐसे लोगों के क़ौल और अमल में पूरी एक लय होती है इन लोगों के ज़रिए खुदा के नबियों के मक़सद बड़े पैमाने पर पूरी दुनिया तक पहुँचते हैं।

सुधार और सोच की इस तहरीक के मुक़ाबले में कुछ लोग बग़ावत का झन्डा उठाते हैं और इस तहरीक की कामयाबी के रास्ते में रुकावटें डालने की कोशिश करते हैं। ऐसे लोगों से मुक़ाबले के लिए कुछ लोगों को आगे आकर उठ खड़े होना (Uprise) करना पड़ता है जिनमें से कुछ लोग इस राह में शहीद हो जाते हैं जिनके पाक ख़ून से तौहीद के पौधे की सिंचाई होती है।

चौथे मरहले में इन ज़हमतों और मशक़्क़तों के नतीजे में सालेहीन (नेक लोगों) का वुजूद में आना है। खुदा के नेक बन्दों से तश्कील पाने वाला समाज एक पाकीज़ा मुक़द्दस और रूहानियत से मालामाल समाज होता है।

दिलचस्प बात यह है कि 'बिहारुल अनवार' की कई रिवायतों की रौशनी में शहीदों और सच्चों का असली और वाक़ई मिस्दाक़ (मुराद) सिर्फ़ मासूम इमाम हैं। (बिहारुल अनवार, 24/30)

सोच, काम और चाल-चलन के सिलसिले में चार जमाअतों के पीछे चलने की तौफ़ीक़ का माँगना वह अहम बात है जो हर नमाज़ में बार-बार दोहराई जाती है। जो भी खुदा के करम, दया और उसके इनाम का हक़दार होता है, न वह ज़िल्लत बर्दाश्त करता है और ना ही ज़ालिमों और सितमगरों की मदद करता है जैसा कि जनाबे मूसा अ० ने एलान किया:

"رَبِّ بِمَآ اَنۡعَمۡتَ عَلَیَّ فَلَنۡ اَکُوۡنَ ظَهِیۡرًا لِّلۡمُجۡرِمِیۡنَ"

(सूरए क़सस/17)

ऐ खुदा! तूने मुझे जो नेमतें दी हैं उनका शुक्राना यह है कि मैं हरगिज़ ज़ालिमों और मुजरिमों का साथ न दूँ। यहीं से एक नमाज़ी इन्सान के सोच और अमल के रुजहान और उसकी मोहब्बत का तअय्युन हो जाता है जो खुदावन्दे आलम से ऐसे पाकीज़ा लोगों के रास्ते पर चलने का मुतालबा करता है।

गैरिल मग़-जू-बि अलैहिम व-लज़-ज़ाल्लीन

(غَيۡرِ الۡمَغۡضُوۡبِ عَلَيۡهِمۡ وَلَا الضَّآلِّيۡنَ.)

न कि उनका रास्ता जिन पर अज़ाब नाज़िल हुआ और न गुमराहों भटकों का रास्ता। यानी न फ़िरऔन और ग़ज़ब का शिकार उस जैसे लोगों का रास्ता जिन्होंने अपने वचन तोड़कर सर उठाया और बग़ावत की और नील दरिया में डुबा दिए गए और न क़ारून और पत्थर दिल धनी लोगों का रास्ता जो खुदा वाले रहबरों के सामने सर उठाने और बग़ावत के नतीजे में खुदा के ग़ज़ब/प्रकोप का शिकार होकर ज़मीन में ज़िन्दा धंसा दिए गए और न ही बे

अमल और दुनियादार और दुनिया के पुजारी उलमा का रास्ता जिन पर ख़ुदा का ग़ज़ब नाज़िल हुआ।

'मग़ज़ूब' यानी ग़ज़ब का निशाना बनने वाले लोगों की सही पहचान के लिए पिछली उम्मतों के दौर में पाए जाने वाले उन लोगों के हालात का पढ़ना ज़रूरी है जिन पर ख़ुदा का क़हर व ग़ज़ब नाज़िल हुआ और उसके नतीजे में उन्हें ख़ुदा के अज़ाब और मरन का सामना करना पड़ा जैसे यहूदी, लूत समाज, तागूत सर उठाने वालों के पीछे चलने वाले, मुनाफ़िक़ (ज़बान से माने पर दिल से न मानने वाले) और क़ातिलीन वग़ैरा।

नमाज़ी ऐसे लोगों के रास्ते से अलग-थलग रहने का इज़हार करते हुए ख़ुदा से यह दुआ करता है कि ऐसे लोगों के पीछे चलने वाला क़रार न दिया जाए और इसी तरह वह गुमराहों की राह पर न चले।

जो लोग सोच और अमल से भटके हुए होते हैं वह अपनी गुज़र जाने वाली पुश्तों के बेबुनियाद, ग़लत और शिर्क वाले अक़ीदों, विश्वासों और नज़रियों में गिरफ़्तार रहते हैं और इस गुमराही पर अफ़सोस करते हैं। ऐसे लोग 'ज़ाल्लीन' का मिस्दाक़ क़रार पाते हैं।

सूरए हम्द की चर्चा पूरी होती है यह वह महान सूरा है जो हम्द (ख़ुदा की सराहना, संस्तुति) से शुरु होता है और फिर उस से मदद की दुआ पर ख़त्म होता है यह सूरा शिफ़ा देने वाला और ख़ुदा की किताब (कुरआन मजीद) का दीबाचा (Preface) है।

सूरए 'तौहीद'

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ.

قُلْ هُوَ اللّٰهُ أَحَدٌ. اللّٰهُ الصَّمَدُ. لَمْ يَلِدْ وَلَمْ يُولَدْ. وَلَمْ يَكُنْ لَهُ كُفُوًا أَحَدٌ.

नमाज़ में यूँ तो सूरए हम्द के बाद कोई भी दूसरा सूरा पढ़ा जा सकता है लेकिन सूरए तौहीद की फ़ज़ीलत ज़्यादा है। जमाअत में पेश इमाम के लिए भी बेहतर है कि दूसरों के हाल का ख़याल रखते हुए छोटी सूरे को चुने जिसके लिए आम तौर पर सूरए तौहीद सबसे बेहतर है। यह सूरा भी खुदा के पाकीज़ा नाम से शुरु होता है। बिस-मिल-ला-हिर-रह्-मानिर-रहीम

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ. सूरए तौबा के अलावा सब सूरों के शुरु में मौजूद है जो इस सूरह की पहली आयत गिनी जाती है। सूरए तौबा में चूँकि काफ़िरों और मुश्रिकों पर तन्क़ीद और उन से अलगाव और बेज़ारी का इज़हार है इसी लिए इसमें बिस्मिल्लाह नहीं है इसलिए कि अलगाव और बेज़ारी रहमान और रहीम का गुण के साथ मेल नहीं खाता। खुदा के नाम से शुरु करने का मक़सद अपने काम को खुदाई रंग देना होता है जिस से ऐसा महसूस होता है कि यह काम खुदा के रास्ते और उसकी मर्ज़ी को नज़र में रखकर किया गया है। यह काम इस्लामी तहज़ीब के तालीमी और तरबियती पहलुओं में शुमार होता है।

हर काम खुदा के पाकीज़ा नाम से ही शुरु और ख़त्म होना चाहिए यहाँ तक कि जानवरों को ज़िबह करने में भी

ख़ुदा के नाम से शुरु करना ज़रूरी है वरना बज़ाहिर ज़िबह होने वाला मुर्दार और हराम हो जाता है।

बिस्मिल्लाह के बग़ैर किया जाने वाला काम खोटा रहता है और कभी-कभी उसके नाम पर तवज्जो न देने के नतीजे में अच्छे न लगने वाले वाक़िएऔर हादसे भी पेश आ जाते हैं।

एक आदमी के लिए ऐसा ही वाक़िआ पेश आया कि तख़्त पर बैठते वक़्त तख़्त का पाया फिसल गया और बैठने वाले का सर फूट गया। मौलाए काएनात हज़रत अली[अ०] आए। आप[अ०] ने यह देखकर फ़रमाया:"ऐसा इसलिए हुआ कि तुमने बैठते वक़्त बिस्मिल्लाह नहीं कहा था।"

सूरए तौहीद उस ख़ुदा की तौहीद (एकेश्वरवाद) के पहचनवाने के लिए मिसाली सूरह है। ख़ुदा हर तरह से एक अकेला और बेजोड़ है। उसकी कोई मिसाल नहीं है। चूँकि उसका वुजूद और उसके गुण ला महदूद (असीम/Infinite) हैं और कोई भी ला महदूद एक से ज़्यादा नहीं हो सकता जैसे अगर कोई घर ला महदूद हो तो वह अपनी लम्बाई और चौड़ाई में इतना बड़ा होगा कि उसके अलावा किसी और घर के लिए जगह ही बाक़ी नहीं रहेगी और वह घर अकेला होगा। इसी तरह ख़ुदा का वुजूद चूँकि ला महदूद है इसलिए उसके अलावा कोई दूसरा ख़ुदा नहीं हो सकता।

ख़ुदावन्दे आलम हर चीज़ में एक और अकेला है। वह पैदा करने में एक है "اللهُ خَالِقُ كُلِّ شَىْءٍ" (रअद/16)

रब, पालनहार होने में अकेला है

"هُوَ رَبُّ كُلِّ شَىْءٍ" (अन्आम/164)

मालिक होने में अकेला है

"وَلِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ" (आले इमरान/189)

हाकिम होन में अकेला है

"اِنِ الْحُكْمُ اِلَّا لِلّٰهِ" (अन्आम/57)

फ़रियाद गुहार सुनने और मदद करने में अकेला है

"اَمَّنْ يُّجِيْبُ الْمُضْطَرَّ اِذَا دَعَاهُ وَيَكْشِفُ السُّوْءَ"

(सूरए नमल/62)

(भला वह कौन है जो मुज़तर/बेचैन की फ़रियाद को सुनता है जब वह उसको पुकारता है और उसकी मुसीबत को दूर कर देता है) इनके अलावा दूसरे सभी गुणों और कमाल में एक अकेला और बेमिसाल है।

वह 'समद' है यानी उसे किसी की ज़रूरत नहीं है जिसकी सारी दुनिया मोहताज है और सबकी ज़रूरत उससे लगी है यानी वह खाने पीने, बदलने, साझी रखने, ख़राब होने, ग़ाफ़िल बेसुध होने, थकने, औलाद होने, ख़ौफ़ज़दा होने जैसे तमाम उमूर से पाक है। (बिहारुल अनवार/3/223)

मौलाए काएनात हज़रत अली[अ०] फ़रमाते हैं: समद का मतलब है कि न उसका जिस्म है, न कोई मिसाल, न उसकी सूरत है, न कोई तश्बीह/उपमा, न वह कोई जगह घेरता है और न वक़्त, ज़माना, न उसकी कोई हद है और न आकार सूरत। उसे न ख़ाली कहा जा सकता है और न भरा। (बिहारुल अनवार, 3/223)

"لَمْ يَلِدْ وَلَمْ يُوْلَدْ" यानी न वह किसी का बेटा है और न उसके यहाँ औलाद होती है, न वह किसी से लिया गया है और न उसकी पाकीज़ा और मुक़द्दस ज़ात से कोई चीज़ ली गई है। वह फलों की तरह नहीं है जो दरख़्तों से तोड़े जाते हैं या आँसू की तरह नहीं है जो आँख से निकलता है या उस चिंगारी की तरह नहीं है जो पत्थरों के टकराने से निकलती है।

यह जुमला यहूद व नसारा के अक़ीदों की तरदीद है जो उज़ैर अ० और ईसा अ० को खुदा का बेटा जानते हैं इसी तरह मुश्रिकों के उस अक़ीदे का इन्कार है जिसमें वह फ़रिश्तों को खुदा की बेटियाँ क़रार देते हैं।

لَمْ يَكُنْ لَّهُ كُفُوًا اَحَدٌ वह बेमिसाल है उसकी ज़ात, गुण या कामों में कोई भी उसके जैसा नहीं है

"لَيْسَ كَمِثْلِهٖ شَئٌ" कोई भी चीज़ उसके जैसी नहीं है।

क़राअत के वक़्त सुकून

हम्द व सूरह की तिलावत के वक़्त जिस्म पूरी तरह ठहरा रहना चाहिए (हिलना-डुलना नहीं चाहिए) और सही क़राअत (पाठ) करना चाहिए और इन बोलों का तलफ़्फ़ुज़ (ज़बान से निकलना) बैनुलअक़वामी अरबी ज़बान बोलने की तरह बग़ैर ग़लती के सही होना चाहिए। सही क़राअत का सीखना कोई मुश्किल काम नहीं है। हाँ थोड़ा हौसला और थोड़ी मश्क़ (Practice) दरकार है। अरबी क़ुरआन और इस्लाम की ज़बान है जिस तरह दुनिया का हर पायलेट एयरपोर्ट पहुँचने पर सिर्फ़ अंग्रेज़ी ज़बान में ही

बात करता है उसी तरह नमाज़ जो हक़ीक़त में ख़ुदा की जानिब मेराज की मंज़िल और एक तरह की उड़ान है उसके बोलों की अदाएगी ख़ुदा से राब्ते की दलील के तौर पर सही अरबी ही में होना चाहिए।

नमाज़ के वक़्त इन्सान अपने दिल व जान से ख़ुदा की बारगाह में हाज़िर और उसका ध्यान पूरे तौर पर सिर्फ़ ख़ुदा की ज़ात पर हो ऐसे मौक़े पर बेहतर है कि इन्सान की नज़र सजदा करने की जगह पर हो और उसका दिल ख़ुदा के महान दरबार के तईं झुका हो। क़ुरआन मजीद उन साहेबाने ईमान को कामयाब क़रार देता है जिनकी नमाज़ों में ख़ुशु (झुकना) पाया जाता है। (सूरए मोमिनून/1-2) यानी जो ख़ुदा और उसकी बड़ाई महानता का ध्यान रखे और उस से वाकिफ़ हो और उसी बड़ाई के एहसास के पेशे नज़र अपने जिस्म व रूह को उसके तईं झुका दे, गिरा दे।

हमारे प्यारे नबी[स॰] ने एक शख़्स को देखा जो नमाज़ में अपनी दाढ़ी से खेल रहा था। आप ने फ़रमाया:"अगर इसकी तवज्जो नमाज़ में होती और इसके दिल में ख़ुशू(झुका और लगा) होता तो यह इस तरह की नमाज़ न पढ़ता।"

अलबत्ता नमाज़ में दिल का लगना, और झुकना नमाज़ के सही होने का एक पहलू है।उसके लिए इस सिलसिले में दूसरों के हुक़ूक़ का ख़याल रखने का भी बड़ा अहम रोल है। मौलाए काएनात[अ॰] जनाबे कुमैल से फ़रमाते हैं: "ग़ौर करो कि किस पहनावे और किस जगह नमाज़

अदा कर रहे हो। अगर तुम्हारा पहनावा या जगह हलाल की कमाई की न हो तो तुम्हारी नमाज़ सही नहीं है।

रुकू

रुकू का मतलब है कि हम्द व सूरा मुकम्मल होने के बाद खुदा की बड़ाई के सामने ताज़ीम में झुकते हुए इस हद तक झुका जाए कि हाथ ज़ानू तक पहुँच जाएं, पीठ बिल्कुल बराबर (समतल/Plane), गर्दन झुकी हुई आगे की तरफ़ खिंची हुई हो जैसे नमाज़ी इस बात के लिए हाज़िर है कि खुदा के रास्ते में उसकी गर्दन मारी जाने वाली और उसकी जान का नज़राना (भेंट) कुबूल होने वाला है।

हर रकात में एक रुकू ज़रूरी होता है, सिवाए नमाज़े मैय्यत के इस नमाज़ में रुकू और सजदे नहीं होते बल्कि नमाज़े आयात की हर रकात में पाँच रुकू होते हैं।

रुकू जो नमाज़ के रुकनों (स्तम्भों) में से है और इसकी जानबूझ या भूलचूक से कमी या ज़्यादती नमाज़ को ग़लत कर देती है। यह बन्दगी (दास होने को ज़ाहिर करने) का एक बेहतरीन ज़रिया है। रुकू अदब है और सजदा खुदा के क़रीब होने का ज़रिया। उसके क़रीब सिर्फ़ वह बन्दे होते हैं जो उसके अदब में कमी न करें। यह बात इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] की गुफ़्तुगू में भी ज़िक्र हुआ है। आपने फ़रमायाः

"وَفِى الرَّكُوعِ اَدَبٌ وَفِى السُّجُودِ قُرْبٌ وَمَنْ لا يَحْسُنُ

الادبَ لَا يَصْلَحُ لِلْقربِ" (बिहारुल अनवार, 82/108)

रिवायात में मासूमीन[अ०] के रुकू और सुजूद के जो नमूने (Illustration) ज़िक्र हुए हैं उन्हें देखकर इन्सान शर्मिन्दा

हो जाता है कि कहाँ उनकी नमाज़ और कहाँ हमारे रुकू व सजदे।

ख़ुदा के औलिया (दोस्तों/अल्लाह वालों) का रुकू

अमीरुलमोमिनीन हज़रत अली[अ०] इतनी देर तक रुकू फ़रमाते थे कि आपकी पिंडलियों से पसीना बहने लगता था कि आपके तलवे भीग जाते थे। (बिहारुल अनवार, 82/110)

एक आदमी इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] के घर में दाख़िल हुआ। उसने देखा इमाम[अ०] रुकू की हालत में ख़ुदा की तस्बीह में मसरूफ़ हैं आपने 60 मर्तबा तस्बीह दोहराई। (वाफ़ी, 2/107)

एक दूसरी हदीस में आया है कि इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] रुकू और सजदे में ज़िक्रे इलाही (ख़ुदा का ज़िक्र) 30 मर्तबा दोहराते थे।

मरहूम फ़ैज़ काशानी फ़रमाते हैं कि ज़िक्रे इलाही के30 मर्तबा का यह दोहराना नमाज़े जमाअत में होती थी और यह तैय है कि इमाम[अ०] जमाअत में बूढ़ों, कमज़ोरों के हालात का ख़याल रखते थे इसलिए यह कहा जा सकता है कि जमाअत में शरीक होने वाले सब लोग इस बात को चाहते थे ज़िक्रे इलाही को कम से कम 30 मर्तबा दोहराया जाए।

रुकू में سُبْحَانَ رَبِّیَ الْعَظِیْمِ وَبِحَمْدِہٖ कहा जाता है और महान पालनहार की तस्बीह और उसकी तारीफ़ की जाती है।

जब आया "فَسَبِّحْ بِاسْمِ رَبِّكَ الْعَظِيمِ" (वाक़िआ/74)

(अब आप अपने महान पालनहार के नाम की तस्बीह करें यानी हर तरह की कमी से उसके पाक होने का एलान करें) नाज़िल हुई तो हमारे रसूल[स०] ने फ़रमायाः

"اِجْعَلُوهَا فِى رُكُوعِكُم" इसे रुकू में रख दो।

फ़रिश्तों के साथ

फ़रिश्ते हमेशा ख़ुदा की इबादत की हालत में रहते हैं। उनमें से कुछ हमेशा रुकू में रहते हैं और कुछ सदा सजदे में रहते हैं और तस्बीह में लगे रहते हैं। 'नहजुल बलाग़ाह' में मौलाए काएनात हज़रत अली बिन अबी तालिब[अ०] का यह कहना आया हैः

"مِنهُم سُجُود لا يَرْكَعُونَ وَرُكُوعٌ لا يَنْتَصِبُونَ وَصَافُّونَ
لَا يَتَزَايَلُونَ وَمُسَبِّحُونَ لا يَسْئمُونَ"

(नह्जुल बलाग़ाह, ख़ुतबा/1)

उनमें से कुछ हमेशा रुकू में रहते हैं कुछ सजदे में कुछ सफ़ (Que) बान्धे तस्बीह में लगे रहते हैं जिन्हें थकन नहीं होती।

जो नमाज़ में रुकू करते हैं उनकी गिनती फ़रिश्तों के साथ होने लगती है बल्कि सारी मख़लूक़ात (सृष्टि) के साथ हो जाते हैं जो हमेशा अल्लाह की तस्बीह की हालत में रहती है। इस से बड़ी इज़्ज़त और क्या हो सकती है और इसी तरह इस से बढ़कर ग़फ़लत और बदबख़्ती क्या हो सकती है कि इन्सान नमाज़, रुकू और सजदे से अजनबी हो।

सजदे

सजदा ख़ुदा के सामने अपने को इन्तेहाई हक़ीर समझने और उसके तईं ख़ाकसारी और दण्डवत का नाम है। यह इबादत की सबसे ऊँची मिसाल है। सजदे के ज़रिए इन्सान अपने को सारे निज़ामे काएनात (ब्रह्माण्ड के सिस्टम) के साथ हिस्सेदार, साझी महसूस कर लेता है।

"وَلِلّٰهِ يَسْجُدُ مَا فِى السَّمٰوٰتِ وَمَا فِى الْاَرْضِ" (नहल/49)

ज़मीन व आसमानों में पाई जाने वाली सारी चीज़ें ख़ुदा के दरबार में सजदा करती, दण्डवत हैं।

सजदा वह सबसे बेहतर हालत है जिसमें इन्सान ख़ुदा से सबसे ज़्यादा नज़दीक होता है।

सजदा इन्सान की ज़िन्दगी के चार ज़मानों, कालों का राज़ है। मौलाए काएनात हज़रत अली[अ०] फ़रमाते हैं: पहला सजदा यानी ख़ाक से होना, सजदे से सर उठाना दुनिया की ज़िन्दगी की निशानी है दूसरा सजदा मर जाने और ज़मीन में दोबारा वापस जाने की तरफ़ इशारा है फिर सजदे से सर उठाना क़यामत में फिर उठने का संकेत है। (बिहारुल अनवार, 82/139) यह इस आयत का मफ़हूम है जिसमें इरशाद हुआ है कि तुम्हें हम ने मिट्टी से पैदा किया है मिट्टी में ही वापस करेंगे और मिट्टी से ही फिर उठायेंगे। (सूरए ताहा/13)

सजदा गुलाम, दास होने की निशानी है इसलिए खाई और पहनी जाने वाली चीज़ों पर सजदा करना मना है इसलिए क़ुर्बे इलाही की मंज़िल में उस चीज़ पर सजदा नहीं करना चाहिए जिस से इन्सान की ज़रूरत जुड़ी हुई

दिखे। (वसाएलुश्शीआ, 3/591) सजदा ख़ुदा के अलावा किसी दूसरे के लिए जाएज़ नहीं है। (जिन, आयतः 18) अगर जनाबे यूसुफ़[अ०] के भाईयों ने भी उनके सामने सजदा किया था वह भी असल में ख़ुदा की इबादत और उसके तईं शुक्र करने के लिए था कि उसने जनाबे यूसुफ़[अ०] को कुँएं से निकाल कर इस इ़ज़्ज़त और ऊँचाई तक पहुँचाया। (सूरए यूसुफ़/100)

ख़ुदा के दरबार में हर चीज़ सजदा करती है। अल्लाह वाली सोच और क़ुरआन मजीद के लिहाज़ से पूरी दुनिया और उसकी हर चीज़ में 'समझ' है और ख़ुदा की तस्बीह व तक़दीस में लगी है। क़ुरआन मजीद की बहुत सी आयतें इस पर गवाह हैं जैसे:

"اَلَمْ تَرَ اَنَّ اللّٰهَ يَسْجُدُ لَهُ مَنْ فِى السَّمٰوَاتِ وَمَنْ فِى الْاَرْضِ

وَالشَّمْسُ وَالْقَمَرُ وَالنُّجُومُ وَالْجِبَالُ وَالشَّجَرُ وَالدَّوَآبُّ

وَكَثِيْرٌ مِّنَ النَّاسِ وَكَثِيْرٌ حَقَّ عَلَيْهِ الْعَذَابُ." (हज/18)

क्या तुम ने नहीं देखा कि ज़मीन व आसमानों में, जो चीज़ें हैं वह ख़ुदा के आगे सजदे में हैं इसी तरह सूरज, चाँद, तारे, पहाड़, पेड़-पौधे, चौपाए और बहुत से लोग जो सजदे से मुँह फ़िराते हैं और उनके बारे में ख़ुदा का आख़िरी हुक्म अज़ाब होता है।

फ़ारसी के मशहूर शायर मौलवी (मौलानाए रूम जलालुद्दीन रूमी) ने भी अपने शेरों में दुनिया के सारे ज़र्रों के समझऔर उनके बोलने की तरफ़ इशारा किया है वह कहता है:

'पानी, मिट्टी और फूलों की समझ भरी बातचीत

सिर्फ़ दिल रखने वाले ही महसूस कर पाते हैं। दुनिया में छिपे सारे ज़र्रे अपनी-अपनी जगह पर इन्सान से कहते हैं कि हम सुनते भी हैं और समझते भी हैं हाँ तुम अजनबी अनजान इन्सानों को ख़ामोश दिखाई देते हैं।

जमादात (अचल चीज़ें, खनिज, पत्थर आदि) की तरफ़ ध्यान से देखो तो तुम्हें दुनिया की चहल-पहल सुनाई देगी और जमादात तक की ज़बान से ख़ुदा की तस्बीह व तक़दीस की आवाज़ आएगी जिस से उसके बारे में कुछ और समझने का दरवाज़ा बंद हो जाएगा।'

यह सोच कुरआनी आयात में भी बयान हुई है। ख़ुदा ने कुछ नबियों को चिड़ियों की बोली का इल्म (ज्ञान) दिया था। हज़रत सुलेमान[अ०] चींटियों की ज़बान समझते थे। दुनिया की सारी चीज़ें ख़ुदा की तस्बीह करती है चाहे तुम उनकी तस्बीह नहीं समझते। (सूरए असरा/44)

अल्लामा तबातबाई इस सिलसिले में विस्तार से चर्चा के बाद फ़रमाते हैं:

"وَالحَقُّ انَّ التَّسبِيحَ فِى الجَمِيعِ حقِيقِىٌّ قَالِىّ":

(अलमीज़ान, 13/117)

सच्चाई यह है कि संसार की सारी चीज़ों की तस्बीह हक़ीक़ी है (मजाज़ यानि सिर्फ़ कहने की नहीं) और बोल और आवाज़ की सूरत में है (सिर्फ़ फ़ितरी और भीतरी नहीं है)। हाँ, यह ज़रूरी नहीं है कि उन सबके बोल की आवाज़ें एक जैसी हों। संसार की चीज़ों की तस्बीह के एक मायनी यह भी हैं कि वह अपने पूरे वुजूद के साथ ख़ुदा की बेऐब, बेखोट और बे किसी कमी ख़ुदा की ज़ात (निज) पर

गवाह हैं लेकिन आयतों और हदीसों में इस से भी बड़ी बात कही गई है। हदीस में आया है जानवर के चेहरे पर थप्पड़ न मारो इसलिए कि वह ख़ुदा की तस्बीह करता है। और अपने कपड़े को धोते रहो इसलिए कि गंदे कपड़े ख़ुदा की तस्बीह नहीं करते। (तफ़सीरे नमूना, 12/140)

कुरआन मजीद में हुदहुद के ज़रिए जनाबे सुलेमान[अ०] को ख़बर करने की भी बात है। खुलासा यह कि नमाज़ी इन्सान की तस्बीह व तक़दीस और उसके रुकू व सजदे दुनिया की दूसरी चीज़ों के साथ एक लय और एक ताल में उनमें साथ होने की निशानी हैं।

औलिया (ख़ुदा वालों) के सजदे

अल्लाह के औलिया के सजदों की जानकारी इबादत का सलीक़ा सिखाती है। यहाँ उन सजदों के कुछ नमूने बयान किए जा रहे हैं।

इमाम ज़ैनुलआबेदीन[अ०] अपने सजदे इस तरह पूरी तवज्जो, ध्यान और ख़ुदा के नाम की बार-बार जाप के साथ करते थे कि जब आप सजदे से सर उठाते थे तो आपका पूरा पाक जिस्म पसीने से भीग जाता था।

इमाम मूसा काज़िम[अ०] सुबह की नमाज़ के बाद सजदे में सर रखते थे तो दिन चढ़े तक सजदे की हालत में रहते थे।

जनाब इब्राहीम[अ०] के अल्लाह के ख़लील (दोस्त) बनने की वजह उनके लम्बे सजदे ही थे।

जनाब सलमान फ़ारसी फ़रमाते थे कि अगर सजदे

न होते तो मैं मर जाने की तमन्ना करता (यानी मुझे दुनिया की ज़िन्दगी में से सिर्फ़ सजदा ही पसंद है)।

जनाबे मूसा[अ०] हर नाफ़िला नमाज़ के बाद अपने दाहिने और बायें गाल को मिट्टी पर रखते थे।

एक आदमी बयान करता है कि मैंने इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] को देखा कि सजदे में पाँच सौ मर्तबा 'सुब्हानल्लाह' पढ़ा।

इमाम सज्जाद[अ०] को जो सज्जाद लक़ब (उपनाम) दिया गया उसकी वजह यह है कि आपके सजदे के सातों अंगों पर सजदे के निशान पाए जाते थे।

कुरआन मजीद में हमारे रसूल[स०] के सहाबियों (साथियों) की इन शब्दों में सराहना हुई है: वह लोग काफ़िरों नास्तिकों के लिए कड़े कठोर हैं लेकिन आपस में नर्म दिल और मेहरबान हैं वह रुकू और सजदा करने वाले हैं वह खुदा की मर्ज़ी और खुशी की खोज में रहते हैं उनके माथे पर सजदे का निशान साफ़-साफ़ दिखाई देता है:

"سِيمَاهُمْ فِى وُجُوهِهِم مِّنْ اَثَرِ السُّجُودِ"

(फ़तह/29)

सजदे के फ़ायदे

सजदा इन्सान को खुदा से क़रीब कर देता है, गुनाहों को ख़त्म कर देता है, शैतान की कमर तोड़ देता है और इन्सान को जन्नत में दाख़िल होने का हक़दार (पात्र) बना देता है।

इस सिलसिले में कुछ हदीसें बयान की जा रही हैं:

एक शख़्स हमारे प्यारे रसूल[स०] की सेवा में हाज़िर हुआ और कहा कि हमारे गुनाह बहुत ज़्यादा और हमारे नेक काम बहुत कम हैं। आपने फ़रमायाः अपने सजदे ज़्यादा करो इसलिए कि जिस तरह हवा पत्तों को गिराती है उसी तरह सजदा गुनाहों को ख़त्म कर देता है। (बिहारुल अनवार, 82/162)

रसूल[स०] की सेवा में कुछ लोग हाज़िर हुए और आप से अपने जन्नती होने की ज़मानत चाही। आपने फ़रमायाः मैं ज़मानत लेता हूँ लेकिन इस शर्त के साथ कि अपने लम्बे सजदों से इस काम में मेरी मदद करो। (बिहारुल अनवार, 82/164)

इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] इरशाद फ़रमाते हैं कि अपने लम्बे सजदे ज़्यादा करो इसलिए कि सजदे सबसे ज़्यादा शैतान को तकलीफ़ पहुँचाते हैं। इसलिए कि उसे आदम को सजदा करने का हुक्म दिया गया और उसने हुक्म न माना, जबकि इन्सान ने हुक्म माना और कामयाबी पा ली। (बिहारुल अनवार, 82/163)

पैग़म्बरे इस्लाम[स०] ने एक सहाबी से फ़रमायाः

"اِذَا اَرَدْتَ اَنْ يَحْشُرَكَ اللّٰهُ مَعی فَاَطِلِ السُّجُودَ بَيْنَ يَدَیِ اللّٰه"

(बिहारुल अनवार, 82/164)

अगर क़यामत में मेरे साथ रहना चाहते हो तो ख़ुदा के सजदों को लम्बा करो।

करबला की मिट्टी पर सजदा

कभी कुछ माद्दी (Material) चीज़ें बहुत बड़ी रूहानी (Spiritual) बातों की याद देहानी का ज़रिया बनती हैं। शहीद की क़ब्र की मिट्टी भी इसी तरह है। मुस्तहब (अच्छा) है कि इन्सान इमाम हुसैन अ० की पाक क़ब्र की मिट्टी पर सजदा करे इसलिए कि करबला की ख़ाक पर सजदा करबला के महान साहस व हौसले, कुर्बानी और शहादत की याद दिलाता है। ख़ाके शिफ़ा (करबला की मिट्टी)पर सजदा इन्सान को शहादत और जिहाद की तहज़ीब और Culture से पहचान कराता है। इमाम हुसैन अ० की पाक क़ब्र से कुरबानी की ख़ुश्बू का एहसास होता है इस तरह इमाम हुसैन अ० और उनके साथ शहीद होने वालों की कुर्बानियों से हर दिन एक नया पैग़ाम, नयी सीख और एक नया सबक़ है।

सुब्हानल्लाह के मायनी 'سُبۡحَانَ اللّٰہ'

इस बोल में ख़ुदा की तस्बीह (पाक होने का एलान) और उसके हर खोट, कमी से पाकीज़ा होने का इक़रार छिपा है। 'سُبۡحَانَ اللّٰہ' सुब्हानल्लाह एक ऐसी सच्चाई का एलान है जिसमें सारे इस्लामी अक़ीदेऔर सोच की असल ख़ुदा के साथ इन्सान के लगाव की बुनियाद छिपी है जिसकी मुख़्तसर व्याख्या यह है। तौहीद (एकेश्वरवाद) की बुनियाद तस्बीह है यानी ख़ुदा को साथी-साझी और शरीक से पाक और बिलकुल अलग समझना

"سُبۡحَانَ اللّٰہِ عَمَّا یُشۡرِکُوۡنَ" (तूर/43)

(जबकि ख़ुदा उनके शिर्क (बहुत से ईश्वर मानना)

से पाक है)।

अद्ल (खुदा का न्याय) की बुनियाद भी तस्बीह है। यानी खुदा को ज़ुल्म से परे समझना। खुदा किसी पर कभी भी ज़ुल्म (अन्याय) नहीं करता। अगर इन्सान के लिए आफ़तें, बलाएं और मुश्किलें होती हैं, वह या इन्सान में निखार लाने के लिए इम्तेहान के मक़सद से होती हैं या इन्सान के अपने आमाल का नतीजा होती हैं।

"مَا اَصَابَكُم مِن مُّصِيبَةٍ فَبِمَا كَسَبَتْ اَيْدِيكُمْ"

और तुम तक जो मुसीबत भी पहुँचती है वह तुम्हारे हाथों की कमाई है। (सूरए शूरा/30) इसलिए खुदा पाक है हम खुद अपने आप पर ज़ुल्म करते हैं।

"سُبحَانَ رَبِّنَا اِنَّا كُنَّا ظَالِمِينَ" (सूरए क़लम/29)

नुबुव्वत और इमामत की बुनियाद भी तस्बीह पर है इसका मतलब यह है कि खुदा ने इन्सानों को हवस, लालसा और ज़माने के तागूतों (झूटे खुदाओं) से नजात दिलाने के लिए अपनी ओर से इमामों और अगुवाओं को मोअय्यन फ़रमाया है ताकि उनकी अगुवाई में इन्सानी समाज हिदायत (सीधा रास्ता) व सआदत (शुभ क़िस्मत) तैय करके हक़ (सत्य) और खुदा तक पहुँच सके। खुदा ने इन्सान को खुद उसके हाल पर नहीं छोड़ा है क्योंकि खुदा इस बात से परे है कि इन्सान को भटकता छोड़ दे। जो लोग ग़लत अक़ीदा (विश्वास) रखते हैं उन्होंने असल में खुदा को नहीं पहचाना है या जिस तरह उसे पहचानना चाहिए उस तरह नहीं पहचाना है। यानी वह उसे जानने वाला और सूझबूझ वाला नहीं समझते हैं और खुदा की तरफ इस तरह की निसबत देते हैं

"وَمَا قَدَرُوا اللّٰهَ حَقَّ قَدْرِهٖٓ اِذْ قَالُوْا مَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ عَلٰى بَشَرٍ مِّنْ شَیْءٍ" (अनआम/91)

(और उन लोगों ने वाक़ई खुदा की क़दर नही की जब कि यह कह दिया कि अल्लाह ने किसी आदमी पर कुछ नहीं नाज़िल किया (उतारा) है)।

क़यामत का अक़ीदा (विश्वास) भी तस्बीह की बुनियाद पर है

इसलिए कि आख़िरत में एक सदा की ज़िन्दगी, हिसाब व किताब और इनाम व सज़ा के बग़ैर पैदा करने और सीधे रास्ते को दिखाने की बात बे मक़सद होकर रह जाएगी और इस तरह इन्सानों को उनका हक़ न मिल सकेगा। खुदा इस बात से परे और पाक है कि बेमक़सद और बेकार के काम को करे और पैदा करने और सीधा रास्ता बताने के बाद क़यामत न हो।

"اَفَحَسِبْتُمْ اَنَّمَا خَلَقْنٰكُمْ عَبَثًا" क्या तुम्हारा ख़याल यह है कि हमने तुम्हें बेकार पैदा किया है। (सूरए मोमिनून/115)

'سُبْحَانَ اللّٰه' यानी खुदा उस बेमक़सद काम से परे और पाक है कि इन्सानों को पैदा और उनका अन्त बेनतीजा रह जाए और मौजूदाते आलम का यह सबसे हसीन मुरक़्क़ा बेमक़सद ज़िन्दगी गुज़ार कर दुनिया से रुख़सत हो जाए।

खुदा के प्रेम, मोहब्बत की बुनियाद भी तस्बीह है इसलिए कि जब वह परमेश्वर और हर खोट, कमी से पाक है तो उस से इश्क़ व मोहब्बत क्यों न हो।

इन्सान के ख़ुदा से राज़ी रहने की बुनियाद भी तस्बीह है। इन्सान ख़ुदा से राज़ी है यानी उसके कामों में कोई कमी नहीं निकालता और अपने पूरे आपे के साथ उसकी तस्बीह करता है।

ख़ुदा के हुक्म पर चलने की बुनियाद भी तस्बीह है: इसलिए कि इन्सान सिर्फ़ उसी की आज्ञा, हुक्म पर चलता और उसी की गुलामी करता है जो हर तरह से 'पूरा' और हर कमी से परे, पाक परमेश्वर हो।

उस पर भरोसे की बुनियाद भी तस्बीह है: ख़ुदा पर वही भरोसा करेगा जो उसकी क़ुदरत,शक्ति उसके रहम और कृपा का यक़ीन रखता हो, निश्चय हो और उसे हर तरह से अनजान, कमज़ोर और कठोर होने से पाक समझता हो।

तक़्वा (संयम) की बुनियाद भी तस्बीह है:

तक़्वे वाला इन्सान ख़ुदा को जानने वाला, न्याय वाला और गहन हिसाब व किताब रखने वाला समझता है। उसका मानना होता है कि पूरी दुनिया ख़ुदा के सामने है, ऐसा शख़्स ख़ुदा को हर भूल और बेख़बरी से पाक जानता है, इसीलिए उसका ख़याल रखते हुए गुनाहों में गन्दा नहीं होता।

ख़ुलासा यह कि तस्बीह का यह मुबारक बोल एक गहरे और फैले हुए मायनी रखता है और जिसका मतलब ख़ुदा को पाक मानना है इसलिए इश्क़ व मोहब्बत, उसकी गुलामी, इबादत (भक्ति) उस पर भरोसा, उसके बारे में डर, दाब, संयम, उसका कहना मानना, उसके एक अकेले होने और उसकी ओर से मदद के इन्तेज़ाम, उसके अद्‌ल,

न्याय का अक़ीदा और आख़िर में क़यामत के मानने की बुनियाद सिर्फ़ तस्बीह है। बस जब वह हर कमी खोट से परे है तो हर सराहना का हक़दार है इसलिए तस्बीहाते अरबआ (चार जाप) में तस्बीह के फ़ौरन बाद उसकी सराहना, संस्तुति (वल हम्दु लिल्लाह) का तज़किरा है।

क़ुरआन मजीद ख़ुदा को शरीक साझी से अलग क़रार देता है।

"سُبۡحَانَ اللّٰهِ عَمَّا يُشۡرِكُونَ" (सूरए तूर/43)

इन्सानों की सराहना, गुणगान से और उनके बयान से परे जानता है।

"سُبۡحَانَ اللّٰهِ رَبِّ الۡعَرۡشِ عَمَّا يَصِفُونَ" (अम्बिया/22)

(अर्श का मालिक पालनहार उनके बयानों से बिल्कुल परे है, पाक है)। क़ुरआन की नज़र में वह हर तरह की ज़रूरत, चाहत और दरिद्रता से परे है, पाक है।

"سُبۡحٰنَهٗ هُوَ الۡغَنِيُّ" (सूरए यूनुस/68)

(वह पाक, भरापुरा, 'मालामाल' है) खोखली और बेमक़सद के सिरजन से पाक है।

"رَبَّنَا مَا خَلَقۡتَ هٰذَا بَاطِلًا، سُبۡحَانَكَ" (सूरए आले इमरान/191)

(ऐ ख़ुदा! तूने यह सब बेकार नहीं पैदा किया है, तू पाक है)

लोगों पर ज़ुल्म व सितम करने से परे है बल्कि लोग अपने ऊपर ख़ुद ही ज़ुल्म करते हैं।

"سُبۡحٰنَكَ اِنِّيۡ كُنۡتُ مِنَ الظّٰلِمِيۡنَ" (अम्बिया/87)

(तू पाक है और मैं अपने आप पर ज़ुल्म करने वालों

में से था)। ख़ुदा बेटियाँ रखने से परे है।

"وَيَجْعَلُونَ لِلَّهِ الْبَنَاتِ سُبْحَانَهُ" (सूरए नहल/57)

(और यह अल्लाह के लिए लड़कियाँ क़रार देते हैं जबकि वह पाक और पवित्र है) इस ज़िक्र के बार-बार दोहराए जाने का यही राज़ है। यह ज़िक्र रुकू, सजदा, नमाज़ और नमाज़ से अलग भी सभी हालतों में बार-बार दोहराया जाता है। यह तौहीद का पैग़ाम और इसका एक सबसे खुला सबक़ है।

तस्बीह का सबसे ज़्यादा हुक्म

हमारे प्यारे रसूल[स०] जिनकी शिक्षा-दीक्षा और परवान चढ़ाना ख़ासतौर पर ख़ुदा ने अपने ज़िम्मे लिया है और उन पर उसकी ख़ास कृपा करम है जिसकी बुनियाद पर उन्हें एक ख़ास मंसब पद देकर मख़सूस ज़िम्मेदारियाँ भी दी हैं उनको दूसरों से ज़्यादा तस्बीह का हुक्म दिया गया है। अगर कुरआन की आयतों पर नज़र डालें तो महसूस होगा कि ख़ुदा ने अपने चहीते रसूल को Address करते हुए भरोसे का हुक्म आठ मर्तबा, सजदों का हुक्म दो मर्तबा, इस्तेग़फ़ार माफ़ी का हुक्म आठ मर्तबा, इबादत का पाँच मर्तबा, ख़ुदा की याद का हुक्म पाँच मर्तबा, तकबीर (ख़ुदा की बड़ाई- अल्लाहु अकबर कहना) का हुक्म दो मर्तबा दिया है जबकि तस्बीह का हुक्म सोलह मर्तबा आया है। वह भी अलग-अलग हालतों और अलग-अलग मौक़ों पर इस तरह कि आप[स०] बराबर ख़ुदा की ओर अपना ध्यान रखते थे इसीलिए तस्बीह के बयान के साथ इस क़िस्म के शब्द आये हुए हैं।

(1) "قَبلَ طُلوعِ الشَّمسِ وَقَبلَ غُروبِها" (सूरए ताहा/130)

सूरज निकलने से पहले और सूरज डूबने के बाद।

(2) "وَمِن آناءِ اللَّيلِ فَسَبِّح وَاَطرافَ النَّهارِ" (ताहा/130)

रात और दिन ख़ुदा की तस्बीह करो।

(3) "وَسَبِّح بِحَمدِ رَبِّکَ حينَ تَقومُ" (तूर/48)

सोकर उठते वक़्त या खड़े होते वक़्त तस्बीह करो।

इस से 'सुब्हानल्लाह' के कहने और जपने की अहमियत मालूम होती है और नमाज़ी इन्सान के काम और सोच के सुधार में इसके असर का अंदाज़ा लगाया जा सकता है। इमाम ज़ैनुलआबेदीन[अ०] फ़रमाते हैं:

"اِذاقالَ العَبدُ سُبحانَ اللهِ صَلّیٰ عَلَیهِ کُلُّ مَلَکٍ" (तौहीद, सदूक़/312)

जब बन्दा (दास) सुब्हानल्लाह कहता है तो फ़रिश्ता उस पर दुरूद (वरदान) भेजता है।

कुनूत

कुनूत के मायनी कहना मानना, दुआ, नमाज़ में ख़ुदा की तरफ़ ध्यान और उसके तईं अपने को गिरा हुआ समझने के हैं। नमाज़ में मुस्तहब (अच्छा) है कि इन्सान अपने दोनों हाथ उठा के चेहरे के सामने करे और दुआ करे। शेख़ सदूक़ कुनूत के वाजिब होने को मानते हैं। रिवायतों के मुताबिक़ जुमा की नमाज़, सुबह और मग़रिब की नमाज़ों में कुनूत पर ज़्यादा ज़ोर दिया गया है।

कुनूत में कोई ख़ास दुआ ज़रूरी नहीं है और इमाम जाफ़र सादिक़ के बयान के मुताबिक़ जो दुआ भी ज़बान पर आ जाए वही मुनासिब है। वैसे कुछ दुआओं पर ज़्यादा ज़ोर दिया गया है।

हमारे रसूल स० ने ज़ोर के साथ वसिय्यत फ़रमाई है कि नमाज़ में कुनूत को लम्बा किया जाए, यह क़यामत में हिसाब व किताब की मंज़िल में इन्सान के ठहरने या कठिन वक़्त में फ़ायदे वाला साबित होगा।

"أَطْوَلُكُم قُنُوتاً فِى دَارِ الدُّنْيَا أَطْوَلُكُم رَاحَةً يَوم
الْقِيَامَةِ فِى المَوْقِفِ" (जवाहर, 10/367)

इसी तरह रिवायत में आया है कि बेहतरीन नमाज़ वह है जिसका कुनूत लम्बा हो। कुनूत में दुआ और ख़ुदा से अपनी लगी ज़रूरत माँगी जाती है इसलिए इसमें जितनी अच्छी दुआएं की जाएं और जितनीअच्छी और ऊँची माँगे पेश की जाएं उतना बेहतर है। कुछ उलमा (हाज मुल्ला हादी सब्ज़वारी) नमाज़े शब के कुनूत में दुआए जौशन कबीर पढ़ते थे जो बहुत लम्बी है इसमें ख़ुदा के हज़ार नामों और गुणों का तज़किरा है इस तरह की नमाज़ ख़ुदा से प्रेम और उस से मुनाजात (चुपके दुआ) से दिलचस्पी की अलामत है।

तशह्हुद

तशह्हुद नमाज़ के वाजिबातों में है। हर दो रकात के बाद (और नमाज़े मग़रिब में तीसरी रकात में भी) दोनों सजदों के बाद बैठकर तशह्हुद पढ़ना चाहिए। तशह्हुद में ख़ुदा के एक होने और रसूल हज़रत मुहम्मद स० के रसूल होने की गवाही के साथ मोहम्मद स० व आले मोहम्मद अ० पर सलवात होती है।

तशह्हुद की हालत में दो ज़ानू बैठना चाहिए इस तरह कि दाहिने पैर का ऊपर का हिस्सा बाएं पैर के तलवे

पर रहे और बेहतर है कि बदन का वज़न बाएं पैर पर रहे ऐसा इसलिए कि कुरआन मजीद के मुताबिक़ दाहिना हक़ सत्य और हक़ीक़त की निशानी और बायाँ बातिल असत्य/ग़लत का निशान है।

मौलाए काएनात हज़रत अली[अ०] इस सवाल के जवाब में कि क्यों दाहिने पैर को बाएं पैर पर रखा जाए फ़रमाते हैं कि इसकी वजह यह है कि ख़ुदा बातिल को मिटा दे और हक़ को बाक़ी रखे।

तशह्हुद उसी नारे और पुकार के जैसा है जो नमाज़ के शुरु में अज़ान और अक़ामत में लगाया जा चुका है और यह उस सीधे रास्ते (सिराते मुस्तक़ीम) की याद दिलाता है जिसका तज़किरा शुरु में किया जा चुका है। तशह्हुद में ख़ुदा के एक होने और आप[स०] की रिसालत की गवाही एक साथ बयान हुई है। इस से मालूम होता है कि रहबरी और अगुवाई तौहीद उसी से जुड़ी हुई है।

हम्द सराहना/संस्तुति में बहुवचन (Plural), 'हम' लाने से गुलामी बन्दा होने का ज़ाहिर किया जा सकता है और तशह्हुद में एक वचन 'मैं' से ही गवाही दी जाती है। यह शायद इसकी तरफ़ इशारा है कि यह गवाही हर शख़्स को अपनी पूरी तवज्जो ध्यान और जानने-मानने के बाद देना चाहिए और हर इन्सान को गहरी समझ के साथ ख़ुदा व रसूल के साथ अपने सौंप देने की बात दोहराना चाहिए।

आप[स०] के बारे में अल्लाह के 'अब्द' (गुलाम, दास) और रसूल होने की गवाही से ख़ुद आपकी महानता का अन्दाज़ा लगाया जा सकता है कि जग के पालनहार ने अपनी गवाही के साथ रिसालत की गवाही का तज़किरा

किया है। इसके अलावा इस गवाही से नमाज़ी का खुदाई काम से लगना और उसका मान करना मालूम होता है। तशह्हुद में 'अब्दुहू' का 'रसूलुहू'से पहले होना इस बात का सुबूत है कि रिसालत 'अब्द'होने पर निर्भर है। आप[स०] चूँकि खुदा के बन्दे थे इसलिए आपको रिसालत के लिए चुना गया। तशह्हुद का दूसरा हिस्सा सलवात है आप[स०]और आपकी औलाद पर सलवात भेजना इस्लाम की और खुसूसन शिया मज़हब की पहचान है और इसके बग़ैर नमाज़ अधूरी है।

अहलेसुन्नत तशह्हुद में यह सलवात नहीं पढ़ते लेकिन अहलेसुन्नत के इमाम शाफ़ई ने अपने एक शेर में इस तरह सच्चाई बयान की हैः ऐ रसूल के अहलेबैत[स०] आपकी मोहब्बत हमारे ऊपर फ़र्ज़ है, खुदा ने इसे कुरआन मजीद में नाज़िल फ़रमाया है आपके मर्तबे की ऊँचाई के लिए यही काफ़ी है कि जो आप पर सलवात न पढ़े उसकी नमाज़ नहीं होती। मोहम्मद[स०] व आले मोहम्मद[अ०] पर सलवात भेजने के तरीक़े और असल सलवात पढ़ने के बारे में कई हदीसें अहलेसुन्नत की फ़िक़्ह (धर्म शास्त्र), तफ़सीर (कुर्आन व्याख्या) और हदीसों की किताबों में ज़िक्र हुई हैं, यहाँ तक 'सहीह' बुख़ारी में रिवायत है कि आप[स०] से पूछा गया कि हम कैसे सलवात पढ़ें तो आप ने फ़रमाया कहोः

"اللّٰهُمَّ صَلِّ عَلٰى مُحَمَّدٍ وَّآلِ مُحَمَّدٍ" अफ़सोस इस पर है कि इस हदीस के लिखने में आले मोहम्मद[अ०] का लफ़्ज़ काट दिया जाता है। इसके अलावा बहुत सी दूसरी हदीसों

में भी आप[स॰] के नाम के साथ आले मोहम्मद[अ॰] का तज़किरा हुआ है।

बहुत सी हदीसों में उन लोगों की निन्दा की गई है जो सलवात में मोहम्मद[स॰] के नाम के साथ आले मोहम्मद[अ॰] का ज़िक्र नहीं करते जैसे इरशाद होता है:

"مَنْ قَالَ صَلَّى اللهُ عَلَى مُحَمَّدٍ وَلَمْ يُصَلِّ عَلَى آلِهِ لَمْ يَجِدْ رِيحَ الْجَنَّةِ" (वसाएलुश्शीआ, 4/1219)

जो नबी पर सलवात भेजे लेकिन आल का तज़किरा न करे वह जन्नत की ख़ुश्बू नहीं सूँघ सकता। इसके मुक़ाबले में उन लोगों की तारीफ़ और क़दर की गई है जो सलवात में अहलेबैत[अ॰] का ज़िक्र करते हैं।

आप[स॰] से यह बात दोहराई गई है कि आपने फ़रमाया:

"مَنْ اَرَادَ التَّوَسُّلَ اِلَیَّ وَاَنْ تَكُونَ لَهُ عِنْدِی يَدٌ اُشَفَّعُ لَهُ بِهَا يَوْمَ الْقِيَامَةِ فَلْيُصَلِّ عَلَى اَهْلِ بَيْتِی وَيُدْخِلِ السُّرُورَ عَلَيْهِمْ" (वसाएलुश्शीआ, 4/1221)

इमाम मोहम्मद बाक़िर[अ॰] के बारे में है, उस शख़्स के बारे में रिवायत है कि जो ख़ुद को काबे से चिमटाए अकेले आप[स॰] पर सलवात भेज रहा था और उसमें अहलेबैत[अ॰] का ज़िक्र नहीं कर रहा था। आप ने उस से फ़रमाया: यह सरासर ज़ुल्म अन्याय है। हदीसों में इस सूरत को अधूरा और अबतर (दुमकटा) क़रार दिया गया है। सलवात में आले मुहम्मद[स॰] को याद करना, अहलेबैत[स॰] की क़दर होने के साथ-साथ ख़ुद आपकी वसिय्यत पर काम करना है। हदीसों के मुताबिक़ मोहम्मद[स॰] व आले मोहम्मद[अ॰] पर

सलवात एक ऐसा उजाला है जिस से क़यामत में सिरात पर रौशनी होगी। हमारा दुरूद व सलाम रसूल^{स०} और उनकी आल^{अ०} तक पहुँचता है और वह पाक ज़ातें इसका जवाब भी देती हैं। सलवात गुनाहों का कफ़्फ़ारा (पछतावा) और जान की पाकी का ज़रिया है।

"وَجعَل صَلَواتا عَلَيكم تزكِيَةً لنا وكَفارَةً لِذُنوبِنا"

(ज़ियारते जामेआ कबीरा, कंज़ुल उम्माल, 1/492)

एक और हदीस में आया है कि ऊँची आवाज़ से एक साथ सलवात पढ़ो ताकि तुम्हारे बीच से निफ़ाक़ (दिल से न मानना मगर ज़बान से मानना) जड़ से ख़त्म हो जाए। पैग़म्बरे इस्लाम^{स०} ने फ़रमाया है: तुम्हारा हम पर सलवात भेजना तुम्हारे ईमान के क़ुबूल होने और ख़ुदा की मर्ज़ी के पाने का ज़रिया है इस से तुम्हारे आमाल/कर्म पाकीज़ा हो जाते हैं और उनमें बढ़ोतरी होती है।

रिवायतों में आया है कि जो रसूल^{स०} और उनकी आल^{अ०} पर सलवात भेजता है ख़ुदा और फ़रिश्ते उन पर सलवात भेजते हैं और वह क़यामत में रसूल^{स०} से सबसे ज़्यादा क़रीब लोगों में से होगा। सलवात की इतनी अहमियत है और इसकी अहमियत के लिए यही काफ़ी है कि तशह्हुद में सलवात को ज़रूरी ठहराया गया है। तो हम भी अपने मरतबे की ऊँचाई और अपने सवाब में बढ़ोतरी के लिए दोहराते रहा करें:

"اللّٰهُمَّ صَلِّ عَلٰى مُحَمَّدٍ وَّآلِ مُحَمَّدٍ"

सलाम

तशह्हुद के बाद नमाज़ के आख़िर में तीन सलाम हैं:

पहला सलाम हमारे रसूल[स०] पर।

दूसरा सलाम ख़ुद हम पर और ख़ुदा के सारे नेक बन्दों पर।

तीसरा सलाम आप[स०], सारे फ़रिश्तों और सब मोमिनों वग़ैरा पर।

सलाम में सलामती और भलाई और बरकत माँगी जाती है। सलाम ख़ुदा का एक नाम है जिसके मायनी हैं कि हमें जो भी ख़ुदा से मिलता है वह सब उसकी दया और उसकी तरफ़ से भलाई और बरकत है।

जो सलाम नमाज़ में रसूल[स०] के लिए किया जाता है वह ख़ुदा की बरकत और रहमत (वरदान) के साथ ज़िक्र होता है और यह सलाम का सबसे अच्छा रूप है।

"اَلسَّلَامُ عَلَيْكَ اَيُّهَا النَّبِيُّ وَرَحْمَةُ اللّٰهِ وَبَرَكَاتُهٗ"

हमारा आप[स०] पर सलवात भेजना आपकी उन ज़हमतों कठिनाइयों की क़दर करना है जो आपने हमारी हिदायत में और हमें ख़ुदा के ज्ञान और उसकी पहचान कराने में उठायी है।

नमाज़ी जब नमाज़ में अपने साथ सारे मोमिन भाइयों और ख़ुदा के नेक बन्दों पर सलवात भेजता है तो उसे एहसास होता है कि वह अकेला नहीं है बल्कि इस्लाम की महान समाज का एक मेम्बर है और उसे दुनिया के किसी भी इलाक़े में बसने वाले ख़ुदा के भक्त इन्सानों के साथ अपना पन का एहसास होता है।

ख़ुद सलाम क्या है

नमाज़ के अलावा इस्लामी समाज में सलाम आपसी

मेल-मुलाक़ात के तौर पर अदब और तहज़ीब समझा जाता है जिसके नतीजे में एक तरफ़ मोहब्बतों का तोहफ़ा मिलता है तो दूसरी तरफ़ यह सलाम करने वाले के झुक के मिलने के जज़्बे को दिखाता है कि उसमें घमण्ड और अकड़ का नाम नहीं है, जिसके नतीजे में उसे अज्र व सवाब हासिल होता है।

खुदा जन्नती लोगों पर सलवात भेजता है वरदान देता है। खुदा रसूल[स०] को भी हुक्म देता है कि लोगों से मुलाक़ात के वक़्त उन्हें सलाम करें। फ़रिश्ते भी कामयाब और नेजात पाने वाले लोगों पर सलवात व सलाम भेजते हैं। जन्नती लोग भी एक-दूसरे से मुलाक़ात के वक़्त आपस में सलाम करते हैं।

"تَحِيَّتُهُمْ فِيْهَا سَلَامٌ"

यह कुछ छोटी आयतें थीं जिनमें सलाम की बात है इनके अलावा रिवायतें भी हैं।

सलाम की अहमियत और इसके सवाब के बारे में बहुत रिवायतें मिलती हैं जिन्हें हदीस की किताबों में देखा जा सकता है। यहाँ पर उन रिवायतों में सिर्फ़ कुछ ही बयान की जा रही हैं। उनमें सलाम के बारे में कुछ प्वाइंट की तरफ़ इशारा किया गया है।

"اَبْخَلُ النَّاسِ مَنْ بَخِلَ بِالسَّلَامِ" सबसे बड़ा कंजूस वह है जो सलाम में कंजूसी करे।

इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] हर शख़्स को सलाम करने को इन्केसारी और झुकने की निशानी बताते हैं यानी ऐसे लोग घमण्ड और अकड़ से दूर होते हैं।

कभी हिम्मत बढ़ाने के लिए सलाम किया जाता है और सलाम न करना एक तरह से झिड़कने और होशियार करने में गिना जाता है यानी नही 'अज़ मुन्कर'(बुरी बातों से रोकना) के तौर पर सलाम करना छोड़ा जाता है।

रसूल[स०] ने फ़रमाया: नशे में मस्त, मूर्ति बनाने वालों, जुआ खेलने वालों को सलाम न करो।

हदीस में है कि आप[स०] के अख़्लाक़ शिष्टाचार और ख़ुदा की दया, कृपा से सबसे ज़्यादा क़रीब वह शख़्स है जो सलाम में पहल करे।

इमाम रज़ा[अ०] फ़रमाते हैं जो शख़्स सलाम करने में या सलाम का जवाब देने में ग़रीब और अमीर के बीच फ़र्क़ करे ख़ुदा क़यामत में उस पर ग़ज़ब प्रकोप करेगा।

सलाम करना मुस्तहब है लेकिन इसका जवाब देना वाजिब है और सलाम का जवाब कुछ बढ़ा हुआ, ज़्यादा जोश से और ज़्यादा दुआओं के साथ होना चाहिए। क़ुरआन मजीद में इरशाद होता है:

"وَاِذَا حُيِّيْتُمْ بِتَحِيَّةٍ فَحَيُّوا بِاَحْسَنَ مِنْهَا اَوْ رُدُّوهَا"

जब कोई तुम्हारे साथ सलाम व जीने की दुआ के साथ पेश आए तो तुम उसके जवाब में उस से बेहतर सलाम व जीने की दुआ पेश करो।

सलाम करना न सिर्फ़ यह कि छोटा होने की दलील नहीं है बल्कि इस से इज़्ज़त और चाहत, लोकप्रियता बढ़ती है।

हमारे प्यारे रसूल[स०] सबको यहाँ तक बच्चों को भी

सलाम करते थे और इस बात पर फ़ख़ गर्व फ़रमाते थे।

हदीस में आया है कि एक सलाम से 70 सवाब मिलते हैं जिसमें 69 सलाम करने वाले के होते हैं और एक जवाब देने वाले का।

कुरआन मजीद में हुक्म है कि जब अपने घर में प्रवेश लो तो ख़ुद अपने को सलाम करो और उस ख़ुदा की तरफ़ से सलाम जो पाक और मुबारक है। इमाम मोहम्मद बाक़िर[अ०] इस आयत की तफ़सीर (व्याख्या) में फ़रमाते हैं कि इस से मुराद घर वालों को सलाम करना है। इन्सान के बीवी-बच्चे ख़ुद उसके गिने जाते हैं और उनको सलाम करने से बरकत मिलती है और उनको सलाम आपस में मोहब्बत व लगाव रखने और थकन और उकताहट दूर होने का कारण बनता है। सलाम करना फ़ख़ की बात है और इसमें ज़िल्लत बेइज़्ज़ती नहीं है फिर भी छोटे को चाहिए कि बड़े को सलाम करे, जाने या चलने वाले को चाहिए कि ठहरे हुए को सलाम करे, छोटी जमाअत वाले बड़ी जमाअत को सलाम करें।

सलाम के बारे में अमीरुलमोमिनीन हज़रत अली[अ०] से मिली एक रिवायत एक हदीस पर ख़त्म होती है। आप ने फ़रमाया: पैग़म्बरे इस्लाम[स०] सब मर्दों और औरतों को सलाम करते थे लेकिन मौलाए काएनात औरतों को सलाम नहीं करते थे और फ़रमाते थे कि कहीं उनकी नर्म और हल्की आवाज़ें उनके जवाब पर असर न कर दे सलाम का सवाब पाने से पहले वसवसे का शिकार हो जाऊँ।

अल्लामा मजलिसी[रह०] इस हदीस की वज़ाहत में

फ़रमाते हैं कि अमीरुलमोमिनीन[अ०] का यह रवैय्या इस्लाम समाज की शिक्षा व तरबियत (Training) और उन्हें शैतानी वसवसों से बचाने के लिए था, वरना मासूम इमाम[अ०] का बर्ताव रसूल[स०] की सीरत(चाल-चलन) का पूरा-पूरा आईना होता है और उसके लिए वसवसे के शिकार होने का इम्कान नहीं है।

नमाज़ और अल्लाह के नबी

जनाबे ईसा[अ०] झूले में फ़रमाते हैं:

"وَاَوْصَانِی بِالصَّلٰوۃِ وَالزَّکٰوۃِ مَا دُمْتُ حَیًّا" (मरयम/31)

मैं जब तक ज़िन्दा हूँ मुझे नमाज़ और ज़कात की वसिय्यत (ख़ास और बल के साथ ख़ास नसीहत, उपदेश) की गई है।

हज़रत इब्राहीम[अ०] ने अपने बेटे और बीवी को बे हरियाली, सूखे तपते रेगिस्तान (Desert) में छोड़कर एलान किया:

"اِنِّی اَسْکَنْتُ مِنْ ذُرِّیَّتِی بِوَادٍ غَیْرِ ذِی زَرْعٍ عِنْدَ بَیْتِکَ

الْمُحَرَّمِ، رَبَّنَا لِیُقِیْمُوا الصَّلٰوۃَ." (इब्राहीम/37)

मैंने इस उजाड़ बे पानी और बंजर रेगिस्तान में अपनी औलाद को छोड़ दिया जहाँ तेरा घर है ताकि यह नमाज़ क़ाएम रखें।

इसके अलावा आप ने जिस तरह इमामत के लिए अपनी औलाद के हक़दार होने की दुआ की उसी तरह नमाज़ के लिए भी दुआ फ़रमाई:

"رَبِّ اجْعَلْنِی مُقِیْمَ الصلوۃ وَمِنْ ذُرِّیَّتِی"

मावूद मुझे और मेरी औलाद को नमाज़ी क़रार दे।

मासूमों की नमाज़ें

मासूमों[अ०] की नमाज़ें हमारे लिए नमाज़ का Practical सबक़ हैं यहाँ पर उनकी कुछ नमाज़ों को बयान किया जा रहा है।

हमारे रसूल[स०] के लिए अज़ान की आवाज़ इतनी चहीती और मज़े की थी कि अज़ान के वक़्त बिलाल से फ़रमाते थेः "اَرِحنا یا بِلال" बिलाल मेरे चैन का सामान करो।

नमाज़ के वक़्त हज़रत अली[अ०] के चेहरे का रंग उड़ जाता था और आपके मुबारक तन पर कपकपी हो जाती थी। आप फ़रमाते थेः

"جاءَ وَقْتُ الصَّلوٰةِ وَقْتُ اَمانَةٍ، عَرَضَهَا اللّٰهُ عَلَى السَّمٰوٰتِ

وَالْاَرْضِ وَالْجِبالَ فَاَبَيْنَ اَنْ يَحْمِلْنَها وَاَشْفَقْنَ مِنها"

(तफ़सीरे साफ़ी, 2/370)

नमाज़ का वक़्त आ गया खुदा की इस अमानत को अदा करने (विश्वास में सौंपी हुई चीज़ को वापस करने) का वक़्त जिसे खुदा ने आसमान व ज़मीन और पहाड़ सब पर पेश किया लेकिन सबने उसके डर से इसे कुबूल करने से इन्कार कर दिया इन्सान के ज़रिए इस बड़ी ज़िम्मेदारी का उठाना फ़ख़्र वाला है।

इमाम ज़ैनुलआबेदीन[अ०] जब नमाज़ में

مالِكِ يَوْمِ الدِّين पर पहुँचते थे तो इसे बार-बार दोहराते थे कि देखने वाले महसूस करते थे कि जैसे दुनिया से जाने

वाले हों।

इमाम मोहम्मद बाक़िर[अ०] फ़रमाते हैं: मेरे वालिद (पिता श्री) एक दिन रात में एक हज़ार रकात नमाज़ पढ़ते थे।

पैग़म्बरे इस्लाम के बारे में मिलता है कि नमाज़ के वक़्त ऐसा लगता था कि किसी को पहचानते ही नहीं हैं उनके ऊपर एक ख़ास रूहानी हालत छा जाती थी।

आप फ़रमाते थे: भूका खाने से और प्यासा पानी से छक जाता है मगर मैं नमाज़ से नहीं।

मौलाए काएनात हज़रत अली[अ०] जंगे सिफ्फीन में बार-बार आसमान की तरफ़ देख रहे थे। इब्ने अब्बास ने वजह पूछी तो आप ने फ़रमाया अव्वल वक़्त नमाज़ के सबसे पहले वक़्त की वजह से ऐसा कर रहा हूँ कहीं छूट न जाए। इब्ने अब्बास ने पूछा, ऐसी हालत (जंगों) में भी? आप ने फ़रमाया: हाँ।

बेशक जिस तरह मछली पानी पर तैरने से नहीं थकती अल्लाह वाले नमाज़ से नहीं थकते।

अल्लामा अमीनी के बारे में बयान किया जाता है कि एक साल रमज़ान के महीने में आप मशहद शहर में थे इमाम रज़ा[अ०] के हरम में हर रात एक हज़ार रकात नमाज़ पढ़ा करते थे।

★★★★★

अलमुअम्मल कल्चरल फाउनडेशन से जल्द शाया होने वाली किताबें



AL-MU'AMMAL CULTURAL FOUNDATION
546/203, Near Era's Medical College
Sarfarazganj, Lucknow-226003
Ph.: 0522-2405646, Mob.: 9839459672, 9026333361
E-mail: contact@al-muammal.org
website : al-muammal.org